H
294.572
Sa 21 A

H
294.572
Sa 21 A

अवतार गाथा

अवतार गाथा

भगवान श्री सत्यसाई बाबा का संक्षिप्त जीवन परिचय

प्रकाशक : श्री सत्य साई बुक्स एण्ड पब्लीकेशन्स ट्रस्ट (दिल्ली)
ब्लाक " ए " कालकाजी ऐक्सटैंशन एरिया,
नई दिल्ली - 110019

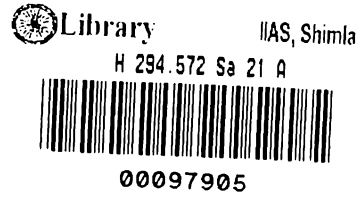

कंवल किशोर एण्ड कम्पनी 18 बीडनपुरा, करोलबाग,
नई दिल्ली-110005. फोन : 5724370 द्वारा मुद्रित

पूर्व-कथा

जब-जब धर्म रसातल जाई,
रहइ अधर्म धरा पर छाई;
तब-तब, मोर नियम, कपिकेतु,
देह धरऊं जग मंगल हेतु।।

(जनगीता)

देव-वन्दित भारत भूमि को इस प्रकार के आश्वासन मिले हैं। राष्ट्र की धमनियां स्वरूप परम पवित्र जाह्नवी और यमुना आज भी अपने कल-कल शब्द से अपने तटों पर घटित श्रीराम और श्रीकृष्ण आदि अवतारों की लीलाओं का गान कर रही हैं। धर्म-संस्थापनार्थ अद्‌भुत और अकल्पनीय शक्तियों ने मानव-देह में धरा पर अवतरित हो सत्य के मार्ग को प्रशस्त किया, यह एक अटल सत्य है।

आर्य-संस्कृति के संकलित साहित्य में एक कथा है

महर्षि भारद्वाज ने वेद-ज्ञान की प्राप्ति में सम्पूर्ण जीवन को ही लगा दिया, परन्तु १०० वर्ष की दीर्घ आयु के पश्चात भी उन्हें यही आभास हुआ—"ज्ञानसागर के तट पर खड़ा हूँ, वास्तविक और पूर्ण ज्ञान अभी भी दूर है" और निज आयु को क्षीण हुआ जान, वह अधिक आयु दिये जाने की विनय लेकर देवपति इन्द्र के पास गये। देवपति ने महर्षि भारद्वाज की ज्ञान-पिपासा देख उन्हें १०० वर्ष की आयु प्रदान की। महर्षि द्विगुणित वेग से ज्ञान-उपलब्धि के अपने अभियान में लगे रहे और वह शताब्दी भी समाप्त हो गई, परन्तु ज्ञानसागर की स्थिति अब भी वही रही। ज्ञानसागर सामने था और भारद्वाज अब भी अपने को तट पर ही पा रहे थे। कारण ज्ञान

अनन्त था, असीम था और थाह अथाह। महर्षि ने महाराज इन्द्र की दया से तीन शताब्दियों की अतिरिक्त आयु प्राप्त की, परन्तु स्थिति लगभग वही थी। तब पुनः वैसी ही प्रार्थना लेकर जाने पर देवपति इन्द्र ने कहा, "महर्षि भारद्वाज! तुम्हारी ज्ञान-जिज्ञासा प्रशंसनीय है, परन्तु तुम इस प्रकार ज्ञान प्राप्ति में सफल नहीं हो सकोगे। जाओ! यज्ञ का आयोजन करो और उसमें आद्याशक्ति जगद्जननी माता पार्वती के आह्वान का प्रयास करो। ज्ञान स्वरूपिणी माता प्रसन्न हो जायें तो तुम्हारी ज्ञान-पिपासा शांत होगी।"

देवराज का परामर्श मानकर भारद्वाज ऋषि ने एक महान यज्ञ का आयोजन किया और स्वयं अनेक कष्ट झेलते हुए देवाधिदेव महादेव चन्द्रमौली भगवान शंकर और माता पार्वती के निवास-स्थल हिमाच्छादित कैलाश पर पहुँचे। सच्चिदान्द जगद्पिता शंकर और ज्ञान स्वरूपिणी माता पार्वती नृत्य-प्रतियोगिता में व्यस्त थे।

अपनी सुधबुध भूलकर महर्षि भारद्वाज निर्निमेष नेत्रों से अद्भुत नृत्य कला को देख रहे थे। प्रतियोगिता इतनी आनन्दप्रद थी कि आठ दिन और रात निरन्तर खड़े रह कर भी महर्षि विश्राम के लिए विचार तक न कर सके। तभी ममतामयी माता पार्वती ने हिमावृत्त भारद्वाज की ओर करुण दृष्टि से देखा और नृत्य करते-करते ही नयन-संकेत से मानो कहा—"वत्स! मैं तेरे यज्ञ में आऊंगी" परन्तु दुर्भाग्य कि भारद्वाज शक्ति-संकेत का अभिप्राय न समझ पाये और निराश होकर बिना प्रणाम किये ही लौट पड़े। अभी दो चार पग भी न चले थे कि उनके शरीर का बांया भाग अशक्त हो गया और वे हिमखण्ड पर गिर पड़े। दयालु शंकर और माता पार्वती ने एक ही साथ उन्हें गिरते देखा। परन्तु परमपिता शंकर ने आगे बढ़कर भारद्वाज को उठाया। उनको स्वस्थ करने के लिए दिव्य कमण्डल का जल उनके शरीर पर छिड़का और भारद्वाज के स्वस्थ होकर खड़े होने पर अमृत तुल्य शब्दों से इस प्रकार कहा—"वत्स भारद्वाज! तुम्हारे द्वारा आयोजित यज्ञ में शक्ति सहित मैं आऊँगा। तुम्हारा यज्ञ सफल होगा। तुम्हारी ज्ञान-पिपासा शांत होगी और तुम्हारे कुल को, गोत्र को धन्य करने के लिए कलियुग में तीन बार तुम्हारे ही गोत्र में उत्पन्न होऊँगा।"

ऐसे सान्त्वना भरे शब्दों से भारद्वाज को आनन्दित करते हुए भगवान शंकर ने पुनः कहा—"मैं जब कलियुग के अपने दूसरे अवतार में 'सत्य साई' के नाम से प्रसिद्ध होऊँगा और शक्ति सहित उस शरीर में रहूंगा, तब यह शक्ति आठ दिन तक निःशक्त रहेगी और तुमने आठ दिन हिम शीत सहकर इसकी प्रतीक्षा में जैसा कष्ट उठाया है, वैसे ही इस भी होगा।" ऐसा कहते-कहते महादेव प्रभु ने भारद्वाज से पुनः पूछा—"हे पुत्र! तेरी और क्या आकांक्षा है, मांग?" आत्मिक तृप्ति से आभिभूत भारद्वाज यह सुन कर गद्‌गद् कण्ठ से बोले—"प्रभु मुझ अकिंचन को आपने सब कुछ दिया, अब आप माता सहित यज्ञ में पधारें। यही मेरी मनोकामना है।" और वांच्छित वरदान पाकर हर्षित हृदय ऋषि निज स्थान को लौटे।

सतयुग में महर्षि भारद्वाज को वरदान मिला था, वह कलियुग में पूर्ण हो रहा है। सर्व प्रथम भगवान शंकर "साई बाबा" के रूप में अवतारित हुए और बम्बई से लगभग २५० किलोमीटर दूरी पर स्थित शिरडी ग्राम को उन्होंने लीला-स्थल बनाया। साई बाबा को गुजरात, महाराष्ट्र, बम्बई और सम्पूर्ण दक्षिण भारत का बच्चा-बच्चा जानता और मानता है। शिरडी ग्राम में साई बाबा का विशाल मन्दिर, उनके द्वारा स्थापित द्वारिका माई मस्जिद आज भी देश-विदेश के लाखों भक्तों को अपनी ओर आकर्षित कर रही है। भक्त आकांक्षायें लेकर आते हैं और उस साई दरबार से मनोवांछित फल पाकर लौटते हैं।

ॐ श्री भारद्वाजऋषिगोत्राय नमः

शिरडी ग्राम के साई बाबा

१९वीं शताब्दी का मध्य

दक्षिण भारत में एक छोटे से ग्राम पथरी में श्री गंगाभव नामक वैदिक ब्राह्मण और उसकी धर्मपत्नी देवगिरी अम्मा नामक महिला निवास करती थीं। दोनों ही यम-नियम का पालन करने वाले, शिव-भक्त थे और अतिथि-सत्कार करने को तत्पर रहते थे। श्रीमती देवगिरी अम्मा प्रतिदिन गौरी पूजा में संलग्न रहती थीं। दोनों के जीवन में परम संतोष की अनुभूति थी, सुख था। यदि कुछ कमी थी, तो बस यही कि कोई सन्तान नहीं थी। दोनों के मन को एक ही भाव पीड़ित किया करता था कि बिना पुत्र के वंश कैसे चलेगा? बिना कन्या-दान किये यज्ञ-फल प्राप्त कैसे होगा?

एक दिन भक्तों को कृतार्थ करने अतिथि रूप में स्वयं साक्षात् भगवान शंकर ही उपस्थित हुए। अपनी आदत के अनुसार श्रीमती देवगिरि अम्मा ने भरसक सत्कार किया और उनकी इच्छानुसार आराम करने की व्यवस्था भी कर दी। लज्जाशील देवगिरी के अतिथि के मुक्त व्यवहार पर संकुचित सी थी, तभी एक षोड्शी, रूप लावण्य युक्त, मृदु हास्य करती देवगिरी अम्मा के द्वार पर आई और उसने आज के आये अतिथि के विषय में पूछा। आश्चर्यपूर्ण मुद्रा में उस सौंदर्य की मूर्ति को अपलक देखते हुए देवगिरी अम्मा ने उस कक्ष की ओर इशारा कर दिया, जिसमें अतिथि ठहरा था। देवगिरी बेचारी सोच रही थी, यह अद्‌भुत अतिथि कौन है? कैसा मुक्त व्यवहार करने वाला है यह? और यह नारी? अरे यह कौन है और कहां से आ गई? अतिथि को पूछती क्यों आई? तभी कमरे से दोनों के जोर से हंसने की आवाज आई। देवगिरी

अम्मा स्तब्ध हो गई। अरे! यह कैसा अद्‌भुत व्यवहार है? क्या लीला है? परन्तु देवगिरी अम्मा के समस्त प्रश्नों का उत्तर मिल गया। कमरे से ध्वनि आई—बच्चो इधर आओ! देवगिरी और उनके पति सहमते से कमरे के द्वार पर पहुंचे। अन्दर झांक कर देखा, कल्याणकारी भगवान आशुतोष विराजमान था। उनके वाम भाग में माता पार्वती बैठी थीं। अभय हस्त, स्मित मुद्रा में अपने इष्टदेव को विराजित देख भक्तों के हृदय में कैसा सुख हुआ होगा, कौन जाने? कितने जन्म-जन्मान्तर का सुफल प्राप्त हो रहा था, कौन कहे? भक्तों के मन में बस एक ही भाव उदय हो रहा था—

जाको नाम सुनत शुभ होई।
मोरे गृह आवा प्रभु सोई।।

औघड़-दानी शंकर ने कहा—'देवगिरि, माँगो तुम्हें क्या चाहिए? निःसंकोच भाव से मांगो। गंगाभव से आज तुम भी अपने मन में कामना मत रहने दो, माँगो! क्या चाहिए?'' पति-पत्नी दोनों ने अपने इष्टदेव के श्रीचरणों पर प्रेमाश्रु चढ़ाते हुए कहा—''भगवान हमें सन्तान दीजिये। हमें अपने चरणों की भक्ति दीजिये।'' भगवान ने 'तथास्तु' कहा और बोले—''देवगिरी, इस युग में मेरे अवतरित होने का समय आ गया है। सतयुग के दिये वरदान पूरे करने का, पृथ्वी के भार को हरण करने का, भक्तों के मनःपुष्प को सुरक्षित करने का समय आ गया है। मेरे आश्रित मेरे भक्त करुण स्वर में मुझे पुकार रहे हैं। तेरे एक पुत्र और एक कन्या उत्पन्न होने के पश्चात मैं स्वयं तेरे गर्भ में आऊँगा। तेरे शरीर से अंश रूप में यह अवतार होगा।''

पति-पत्नी ने भगवान शंकर के शब्दों को सुना और भाव विभोर हो उठे। आज उस जैसा सौभाग्य किसका था? आज उन जैसा सुखी कौन था? भक्तों को भगवान मिले थें, अकिंचन को पारसमणी मिल गई थी, चातक को स्वाति बूँद और निर्बल को सबल का संरक्षण मिल गया था। देवगिरि और गंगाभव के लिए आज का दिन धन्य था। दोनों भाव विभोर हो उठे—आनन्दाश्रु थमते

ही नहीं थे। बस तभी माता पार्वती और शिव अन्तर्धान हो गये।

प्रभु दर्शन के पश्चात भी सांसारिक राग समाप्त न हों तो कब होगें? गंगाभव और देवगिरी अम्मा में कुटुम्ब, संसार और सन्तान के प्रति मोह ही न रहा। फिर भी समय बीतता गया और श्री गंगाभव और देवगिरी अम्मा के दो सन्तानें हुई। दोनों सन्तानों के थोड़ा बड़ा होने पर भविष्य में किसी के अवतरित होने का ज्ञान होने पर भी पति-पत्नि अरण्य-वास के लिए चले गये। सांसारिक झंझटों में फँसे रहना अब उन्हें रुचिकर नहीं था। घोर अरण्य में, पादप-पत्रों के सुमधुर मंद कलरव के मध्य, एक दिन वैरागी देवगिरि अम्मा को पुत्र उत्पन्न हुआ। नवजात शिशु को देखकर भी देवगिरि अम्मा या गंगाभव उसके लालन-पालन के लिए नहीं रुके। जो जगत्-पालक, जिसके भ्रू.....कटाक्ष से न जाने कितने लोक बनते हैं और बिगड़ जाते हैं—उसका लालन-पालन हम करें?

औघड़ शिव के पृथ्वी पर आने का, उनके लालन-पालन का ढ़ंग भी विचित्र ही था और वहाँ अरण्य में, शिशु रूप में निन्तात अकेले पड़े उनको उधर से जाते हुए मुस्लिम फकीर ने, जो स्वयं भी निःसन्तान था। प्रसन्नतापूर्वक उठा लिया और अपने घर ले गया। धार्मिक अभिरुचि वाले मुसलमान के घर भिक्षा के अन्न पर जगद्पिता पलते रहे। चन्द्र कलाओं की तरह लीलाधारी बढ़ रहे थे।

जब यह बच्चा लगभग १२ वर्ष की आयु का था तब पूरा गाँव ही उसकी शरारतों से थर्रा उठा था। नंग-धड़ंग-निर्द्वन्द्व भाव से सब जगह घूमते फिरना ही उसका काम था। अन्य बच्चों के साथ काँच की गोलियाँ खेलना और अनायास ही सब गोलियाँ जीत लेना। एक बार की विचित्र घटना ने पूरे गाँव का ध्यान ही अपनी ओर खींच लिया। गाँव के एक साहूकार का लड़का भी इस मुसलमान फकीर के लड़के के साथ गोलियां खेल रहा था कि वह अपनी सब गोलियां हार गया और अपनी माता के आराध्यदेव, किसी सन्त द्वारा माता को दिए गये शिवलिंग को ही उठा लाया और हारी हुई बाजी को जीतने का प्रयास किया। लेकिन मुसलमान फकीर के यहां पला लड़का हारना

जानता ही न था। वह फिर जीत गया और जीते हुए शिवलिंग को सबके देखते-देखते मुंह में रख कर निगल गया। बच्चों में कौतुहल मिश्रित भय व्याप्त हो गया। तभी उस साहूकार के लड़के की माता पड़ौस से वापस आयी और उसने अपने इष्टदेव भगवान शंकर के प्रतीक की वह दुर्दशा सुनी तो अपना संतुलन खो बैठी।

"गली में खड़े मुसलमान फकीर के उद्दण्ड लड़के को मार ही डालूंगी" हाथ में डण्डा लेकर इस प्रकार चिल्लाती हुई वह प्रतिष्ठित महिला दौड़ी। गली में वह फकीर का लड़का निर्भय खड़ा ही था। महिला ने क्रोध से थर-थर कांपते हुए पूछा—"बता रे शिव कहां हैं?" लड़के ने उत्तर देने के बजाय अपना मुंह खोल दिया। महिला ने मुख में क्या देखा, कौन जाने? न जाने कितनी सृष्टियों की रचना हो रही थी, पल रही थी और नष्ट हो रही थी! महिला अब और भी अधिक काँप रही थी, परन्तु काँपने का कारण क्रोध नही, आश्चर्य मिश्रित भय था। उसके काँपते हाथों से डण्डा छूट गया और वह मुसलमान फकीर के लड़के के पाँवों में गिर गई। शब्द कुछ इस प्रकार ही था—"त्राहिमाम् प्रभु त्राहिमाम्! क्षमा करो नाथ, मैं नहीं जानती थी कि आप स्वयं ही लीला करने आये हैं! मुझ मूढ़ ने आपको पहचाना नहीं। हाय! जिसके लिए मैंने निरन्तर अर्चना की, उसी को मारने दौड़ी। हाय मेरी दुर्बुद्धि!" चरणों पर लोटती नारी उस किशोर के चरण-स्पर्श कर आशवस्त होने का प्रयास करती हुई अपने घर में चली गई।

गाँव में सब जगह इस घटना की चर्चा थी। सब ही साहूकार की पत्नी के व्यवहार पर आश्चर्यचकित थे। धीरे-धीरे सबको पता चलता गया कि साहूकार की पत्नी ने उस लड़के के मुंह में त्रिलोकी के दर्शन किये हैं। "वह लड़का स्वयं ही शंकर है, आदि-आदि।"

अब उस किशोर की दिन चर्या कुछ और ही नया मोड़ ले गई थी। प्रायः खेल से फुर्सत पाकर वह अपने उदर में रखे शिवलिंग को बाहर निकालता था और बिल्वपत्रों, सुगन्धित गंधों आदि से उसका पूजन करता और फिर उसे अपने उदर में रख लेता। उस किशोर का यह कृत्य भी गांव की जनता के

लिए चर्चा का विषय बन रहा था। वह लड़का यह पूजा-अर्चना कहीं भी करने लगता था और प्रायः गाँव की मस्जिदों में भी उसने इस प्रकार की पूजा अनेक बार की। गांव के मुसलमानों को इस बात पर विरोध उत्पन्न हो गया और उन्होंने फकीर को इसके लिए बहुत बुरा-भला कहा। मुसलमान फकीर ने अपनी सामर्थ्य के अनुसार लड़के को बहुत समझाया-बुझाया, परन्तु उस उद्दण्ड लड़के को न कहना मानना था और न उसने माना।

बात बढ़ती गई और मुसलमान फकीर को गाँव से सभी प्रकार की सहायता मिलनी बन्द हो गई। नौबत यहाँ तक आई कि फकीर भूखों मरने लगा। तब विवश होकर उसने लड़के को अनेक प्रकार से प्रताड़ित किया—"अरे कौन तू मेरा पुत्र है? अरे,मैंने तो दया कर तुझे पाला और तू ही मुझे संकट में फँसा रहा है! जा, निकल जा यहाँ से!" और ऐसा कहकर फकीर ने उस उद्दण्ड किशोर को एक दिन घर से निकाल दिया।

अब जहाँ उसकी इच्छा होती, वह वहाँ जाता। जहाँ इच्छा होती, सो जाता। खाने-पीने की चिन्ता थी ही नहीं। बस कभी-कभी शिवलिंग को निकालता और उसकी पूजा करता। दीपक जलाने के लिए तेल मिलता, तो तेल से दीपक जलाता, अन्यथा तेल न मिलने पर दीपक में जल डालकर ही दीपक जला देता। देखने वाले देखते थे और चुप होकर रह जाते थे। समझ में न आने वाला एक प्रश्न चिन्ह उनके सामने था—यह कौन है? परन्तु उत्तर कौन देता?

एक दिन गोदावरी के तट पर बालक घूम रहा था। किसी नवाब का एक प्रिय अश्व खो गया था और वह ढुँढ़ता वहाँ पहुँच गया। उसने लड़के से पूछा—"क्या तुमने कोई घोड़ा इधर देखा है?" लड़के ने उत्तर दिया—"हाँ तुम्हारा घोड़ा कहाँ है, मैं जानता हूँ। तुम्हें कहीं जाने की आवश्यकता नहीं देखो मैं उसे यहीं बुलाता हूँ।" और तभी कुछ क्षणों में घोड़ा हिनहिनाता वहाँ आ पहुँचा। चमत्कृत करने को घटना प्रर्याप्त थी। उस फक्कड़ का प्रथम शिष्य यह नवाब ही बना और जब निकट के शिरडी गाँव में इस बच्चे ने आगामी लीलायें प्रारम्भ की और "शिरडी के साई बाबा" के नाम से प्रसिद्ध हुए, तभी

नवाब की साई बाबा के चरणों में भक्ति, अन्य भक्तों के लिए अनुकरणीय बन गई।

शिरडी ग्राम में एक टूटी दीवार के पाश्रव में आकर वह चमत्कारी युवक ठहरा था और फिर वहीं रम गया। कुछ कहते हैं कि किसी बारात के साथ वह आया था और फिर लौटकर ही न गया—घटनाक्रम कुछ भी रहा हो परन्तु साई नाथ को, साई बाबा को, शिरडी साई आदि अनेक नाम से विख्यात उस कैलाशवासी को अपनी लीला के लिए शिरडी गाँव ही केन्द्र के रूप में पसन्द आया था—यह सत्य है। आज भी साई बाबा के द्वारा प्रज्ज्वलित शिरडी की द्वारका माई मस्जिद में धूनी धधक-धधक कर प्रथम अवतार का—भगवान आशुतोष के प्रकट होकर लीला करने का प्रमाण दे रही है। उनके हाथों जलाये सात दिये आज भी भक्तों द्वारा प्रज्ज्वलित रखे गए हैं। उनकी धूंनी से भस्मी लेकर आज भी भक्त रोग-शोक से त्राण पाते हैं। निज मान्यता के अनुसार कोई साई की समाधि पर चादर चढ़ाता है, कोई नारियल का भोग लगाता है कोई केवल दो पैसे की धूप जलाकर साई को रिझाता है—साई दरबार से सबको निज भाव के अनुसार मिलता है—कोई निराश नहीं लौटता। साई के चमत्कार आज भी दक्षिण भारत में प्रसिद्ध है...साई सर्वज्ञ, सर्वत्र और सर्व शक्तिशाली हैं, ऐसा भक्तों का अनुभव रहा है...उनका विश्वास है साई पहले मान भी था...आज भी है।

१९१८ ई० में जब शिरडी ग्राम में भगवान शिरडी साई की इच्छानुसार एक विशाल मन्दिर बनकर पूरा हो चुका था, तब उन्होंने अपने भक्तों से कहा—

"देखो यहाँ मूर्ति स्थापित करना" और फिर मन्दिर में एक दिन निज इच्छा से भक्तों को सूचित करने के पश्चात् साई बाबा महा समाधि में लीन हो गये। बाबा के पार्थिव शरीर को उसी स्थान पर समाधि दी गई और ठीक उसके पास शिरडी साई की एक प्रस्तर प्रतिमा आज भी साई बाबा के भाव की अंशतः अभिव्यक्ति करती हुई भक्तों में हर्ष का उद्रेक कर रही है।

पुट्टपर्ती

त्रेतायुग में लीलाधारी ने पवित्र अयोध्या में जन्म लिया, परन्तु अवतार की प्रमुख लीला हुई थी—सागर पार। माता कौशल्या का आँगन, मिथिला का मार्ग, सेतुबन्ध रामेश्वरम् और लंका की पार्श्व भूमि सभी तो भगवान मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम की यशोगाथा गा रही है।

द्वापर में उन कन्हैया को जन्म के लिये तो मथुरा का कारागार भाया था परन्तु फिर न जाने क्यों गोकुल चले गए थे। बाल्यकाल की लीलाओं का सुख देकर कंस वध के लिए मथुरा आये थे परन्तु अवतार की प्रमुख लीला कुरुक्षेत्र के विस्तृत स्थल पर हुई थी। आज भी कुरुक्षेत्र के रक्तिम कणों से श्रीमद् भागवत् गीता का उद्‌बोधन हो रहा है।

परन्तु कलियुग में प्रभु को विगत का कुछ नहीं भाया। उन्होंने उत्तर भारत से दूर, बहुत ही दूर, भारत के आंध्र प्रदेश में, जन्म लेने का, लीला करने का संकल्प किया और—

आंध्र प्रदेश के अनंतपुर नामक जिले में एक छोटा सा गाँव पुट्टपर्ती है। पवित्र नदी चित्रावती के तट पर बसी हुई ५०-६० कुटुम्बों की छोटी सी बस्ती। कभी इस गाँव का नाम गोल्लपल्ली था—गोल्लपल्ली अर्थात् मीठे पानी वाला गाँव, गोपालों का गाँव, गौओं का गाँव आदि जैसे भाव ही इस नाम से व्यक्त होते थे। परन्तु एक दिन किसी ग्वाले ने देखा कि उसकी गाय घर पर दूध न दे कर एक सर्प को अपना दूध पिला रही है और बिना सोचे समझे ही उस ग्वाले ने सर्प पर पत्थर दे मारा। पत्थर की चोट खा कर सर्प ने शाप दिया—बिना समझे ही तूने पत्थर मारा, यह पूरा गाँव ही सर्पों की बम्बियों के रूप में बदल जायेगा, तुम लोग दूध को तरस जाओगे। और उस सर्प रूपी महान आत्मा की बात पूरी होनी थी और पूरी हुई।

उस पुट्टपर्ती गाँव में रत्नाकर राजू का वंश निवास करता है। इस वंश में बहुत समय पूर्व एक परम हंस परिव्राजक, महाज्ञानी वेंकावधूत नामक जन हुए थे। अपने शिष्यों को सद्मार्ग का उपदेश करते हुए, मैसूर राज्य में हुसेनाबाद शहर में उन्होंने जीवनलीला समाप्त कर दी थी। इस राजू वंश में एक और उल्लेखनीय संत हुए जिनका नाम कोंडम राजू था। इन कोंडम राजू महाशय ने भारतवर्ष में एकमात्र स्थापित योगेश्वर श्रीकृष्ण की पट्टमहिषी सत्यभामा का मन्दिर भी गाँव में बनवाया था।

उस पुट्टपर्ती गाँव को ही भगवान सत्यनारायण ने इस युग में अवतरित होने के लिए चुना। भगवान का यह अवतार पूर्व में हुए सब अवतारों से भिन्न और विचित्र है।

भगवान सत्य साई ने एक बार कहा था—

इस अवतार ने जहाँ जन्म लिया है उस स्थान को छोड़ने की आवश्यकता नहीं होगी। इस बार जो जन्मस्थल है वही लीलास्थल भी रहेगा। पूर्ण लीला के लिए किसी भी अन्य सहायक की आवश्यकता नहीं होगी। श्रीमद्भागवद्गीता में कथित "विनाशाय च दुष्कृताम्" के अनुसार भी अवतार नाश के लिए नही आया है—आज तो प्रत्येक मानव के मन में ही राक्षस की लंका स्थित है और उन समस्त लंकाओं को ध्वंस करके सभी के मन को परिष्कृत करना इस अवतार का लक्ष्य होगा।

भगवान सत्य साई के जन्म स्थल पुट्टपर्ती गाँव का यह शाप जो कभी सर्पराज के द्वारा दिया गया था उनके उस गाँव में जन्म लेने के कुछ समय पश्चात् छूट गया। पुट्टपर्ती गाँव की भूमि पथरीली और लाल बजरी वाली है। रक्तिम कणों वाली समतल भूमि। छोटी-छोटी उपत्यकायें। रेलवे लाइन से लगभग ३२ मील दूरी पर स्थित—प्रकृति की गोद में एकाकी गाँव।

सिकन्दराबाद और बंगलौर के मध्य छोटी लाइन जाती है उसी पर दो स्टेशन आते हैं—एक का नाम है धर्मावरम् तथा दूसरे का पुनुकोण्डा। दोनों स्टेशनों से ही पुट्टपर्ती गांव २२ मील पड़ता है। दोनों स्थानों से ही मोटर जाती है।

पुट्टपर्ती गाँव एक फर्लांग की दूरी पर भगवान सत्य साई का आवास प्रशान्तिनिलयम् है। प्रशान्तिनिलयम् जहाँ सत्संग के लिए एक बड़ा हाल है—भगवान सत्यसाई के पूर्व जन्म शिरडी के साई बाबा के अनेक चित्र तथा वर्तमान अवतार भगवान सत्य साई के चित्रों से सत्संग भवन की प्रचीर सुशोभित है। उसके पार्श्व में ही लगा हुआ भगवान द्वारा स्थापित एक अस्पताल है जिसके द्वारा पास पड़ोस के बहुत से ग्रामीणों की निरन्तर सेवा हो रही है। वहीं एक संस्कृत पाठशाला भी है और साथ ही अंग्रेजी तथा तेलगु भाषा में प्रकाशन कार्य में संलग्न सनातन सारथी का छापाखाना। पुट्टपर्ती में एक छोटा सा बाजार भी प्रशान्तिनिलयम् को बाहर बताया जा रहा है। अब तो भारत सरकार ने पुट्टपर्ती को टाउनशिप घोषित कर दिया है और पुट्टपर्ती गाँव को जोड़ने वाली समस्त सड़कों का निर्माण बड़ी तेजी से हो रहा है।

इस पुट्टपर्ती गाँव में ही लीलाधारी ने अपने पूर्व शरीर शिरडी के साई के रूप में—१९१८ में महासमाधि लेने के ठीक आठ वर्ष पश्चात अवतार लिया था।

बाल-लीला

दिव्य जन्म

पुट्टपर्ती गाँव में राजू परिवार रहता है। उस परिवार के श्री पेद्दावेंकप्पा राजू की पत्नी श्रीमती ईश्वरम्मा बहुत ही धार्मिक स्वभाव वाली महिला थीं। इस दम्पत्ति के प्रथम संतान एक पुत्र हुआ, जिसका नाम उन्होंने शेषम् राजू रखा। उसके बाद वेंकम्मा तथा पार्वतम्मा नामक दो पुत्रियों को माता ईश्वरम्मा ने जन्म दिया। शांत स्वभाव वाली माता अपने भरे परिवार में सुखी थी। नित्य प्रति की पूजा ईश्वर अर्चना, कठोर तप और अनेक व्रत ही उनके जीवन के सार थे। भगवान सत्यनारायण की विधिवत् पूजा करना माता के लिए जीवन का अनिवार्य कार्य था।

माता के मन में न जाने क्यों एक और पुत्र की प्राप्ति की लालसा उत्पन्न हुई और उसने कठोर नियम पालन करने आरम्भ किये। कोई अदृश्य शक्ति, जो उसे किसी ओर संकेत कर रही थी—माता एक विचित्र प्रकार का आकर्षण अपने में महसूस कर रही थी—लेकिन वह क्या है? कौन आनेवाला है—क्या होने वाला है? यह उसकी समझ में नहीं आता था—बस उन ही दिनों भगवान साई माता के उदर में आये। माता की मुख आभा, शरीर सौन्दर्य, तेजस्विता आदि इतनी अधिक बढ़ गई थी कि देखने वाले उसके अद्‌भुत रूप पर आश्चर्य किया करते थे।

माता ईश्वरम्मा को कभी-कभी न जाने किस लोक के दैवी पुरुषों के दर्शन होते थे। कभी-कभी उनका आवास ही पवित्र गंध से भर जाता था। अनेक देवी देवताओं का सान्निध्य उन्हें अनुभव होता था। अद्‌भुत अनुभवों से तृप्त सी होती हुई माता परिणाम की प्रतीक्षा में थी। यम और नियम का पालन अधिक से अधिक हो रहा था। निरन्तर नाम-ध्वनि, जाप और भगवान

सत्यनारायण का ध्यान ही उनका कार्य था।

एक ओर तो माता ईश्वरम्मा के मुख की शोभा निरख घर के और पड़ोस के लोग चकित थे दूसरी ओर घर में नाना प्रकार के चमत्कार घटित होते रहते थे—जैसे रात्रि में दीवारों पर टंगे हुए मदाला में से गमक उठना, मानो कोई अभ्यस्त हाथ उस मदाले को बजा रहे हों। उसमें नीचे रखा हुआ मृदंग स्वयं तरंगे उत्पन्न करता हुआ रात्रि में नीरव प्रहरों को अपनी धीमी ध्वनि से भर दिया करता था। सोते-सोते घर के लोगों की आंख खुल जाती और चमत्कृत होकर ध्वनियां सुनते रहते। एक बार तो ऐसा हुआ कि पेद्दावेंकप्पा पड़ोस के किसी विद्वान के पास गये और उन संकेतों का कारण जानने की इच्छा प्रकट की। सब कुछ सुनने पर उन्होंने कहा—सौभाग्यशाली हो तुम, यह सब तो किसी बहुत ही शुभ घटना के लक्षण हैं। निश्चित होकर प्रभु का ध्यान किये जाओ। कोई बहुत शुभ घटना तुम्हारे परिवार में होने वाली है। कल्याण के सूचक इन संकेतों से घबराने की आवश्यकता नहीं है। उन विद्वान महाशय के ऐसा कहने पर श्री पेद्दावेंकप्पा राजू निश्चित हुए।

धीरे-धीरे सम्पूर्ण वातावरण को सुरभित करता हुआ कालचक्र चलता गया और फिर उस शुभ दिन...

कार्तिक माह का सोमवार था। आद्रा नक्षत्र में भगवान शिव की विशिष्ट पूजा का अवसर था। भगवान अंशुमाली अपने रथ पर आरूढ़ हो पृथ्वी के उस भाग पर पहुंचने के लिए व्यग्र थे—जिनके नाम स्मरण से ही परम कल्याण होता है, उसके श्रीचरणों का पृथ्वी पर आगमन देखने के लिए उनकी उत्सुकता ठीक ही थी। सूर्य रश्मियाँ सतरंगी बन बिखरने का प्रयास कर रही थीं। पक्षियों का सुमधुर कलरव होने लगा था, रजनी की क्लान्तता समाप्त हो रही थी।

ब्रह्मवेला में कैलाशपति के सुप्रभातम् मधुर कण्ठ से गान किये जा रहे थे तभी माता ईश्वरम्मा ने प्रसव पीड़ा अनुभव की। उनकी सास श्रीमती लक्ष्मम्मा पास में ही कहीं भगवान सत्यनारायण की कथा श्रवण कर रही थी कि उनको ईश्वरम्मा सम्बन्धी सूचना प्राप्त हुई। भगवान में अविचल निष्ठा रखने वाली

महिला ने संदेशवाहक को कथा समाप्ति तक प्रतीक्षा करने का संकेत किया और कथा सुनने में ध्यानस्थ रहीं। उनके कथा सुन लेने और प्रसाद लेकर घर पहुँचने पर तथा प्रसाद श्रीमती ईश्वरम्मा के ग्रहण कर लेने पर ही प्रसव की वेदना कुछ अधिक हुई।

माँ की प्रतीक्षा की समाप्ति हुई, जगती में नवीन युग का समारम्भ हुआ, ग्राम मन्दिरों से अचानक ही शंखनाद सुनाई दिया, हर-हर बम-बम शब्दों का सहर्ष उच्चारण करने वाले भक्तों ने शुभ सुचना सुनी—ईश्वरम्मा ने पुत्र को जन्म दिया—श्री पेद्दावेंकप्पा राजू के घर पुत्र हुआ है।

देवाधिदेव महादेव भगवान शंकर के द्वारा सतयुग में महर्षि भारद्वाज को दिये गये वरदान की दूसरी कड़ी आज पूरी हो गई थी। स्वयं अर्द्धनारीश्वर शिव-शक्ति स्वरूपा पृथ्वी पर अवतरित हो गये थे। शिरडी ग्राम में आकर भक्तों की जो मनोभूमि प्रभु आशुतोष ने तैयार की थी अब उस पर अर्द्धनारीश्वर भगवान शिव अपनी लीला करने के लिए आ गये थे।

जन्म के पश्चात् शिशु को माता के पास ही पीढ़े पर लिटा दिया गया था। सूतिका गृह में होने वाले आवश्यक कार्य पूर्ण किए जा रहे थे। तभी उपस्थित महिलाओं ने सांय-सांय की ध्वनि सुनी। ध्यान से खोज करने पर वह स्तब्ध ही रह गयीं। बाल रवि के पीढ़े के नीचे एक भंयकर विषधर सर्प अपना फन लगाये शिशु को धीरे-धीरे हिला रहा था। मानो शेषनाग—शेषशायी को—शयन कराने आया हो या शेषशायी भगवान अपने आने की सूचना इस चमत्कार के द्वारा दे रहे हों।

उपस्थित महिलायें काष्ठवत् होकर रह गयीं। बच्चे के निकट होने के कारण उस सर्प पर चोट भी नहीं की जा सकती थी और वह स्थिति....उन्होंने सामूहिक रूप से ईश्वर की प्रार्थना की। प्रभो, रक्षा कीजिये! रक्षा कीजिये! हे नाथ हम यह सब सहन नहीं कर सकते। सर्प को यहाँ से हटा दीजिये। बालक का शुभ कीजिए। यह कौन जानता था कि इस बालक के आभूषण ही नाग हैं—यह जटाजूटधारी तो सदा ही नागों को अपने शरीर पर सजाये रखता है?

कुछ देर बाद सर्प वहाँ से धीरे-धीरे हटा और कमरे में एक कोने में जाकर अदृश्य हो गया। तब कहीं जाकर उपस्थित महिलाओं की जान में जान

आयी। चन्द्रकलाओं की तरह शिशु बढ़ रहा था। उसकी रूप राशि देखने के लिए ग्राम की वधुयें घिरी रहती थीं, बिना काम के ही बच्चे और बड़े श्रीमती ईश्वरम्मा के निवास पर आते और बच्चे को तनिक देख तथा सन्तुष्ट हो चले जाया करते थे। माता-पिता का सुख अवर्णीय था। भाई-बहनों और घरवालों के लिए तो चमत्कार होता और दूसरे की प्रतीक्षा ही रहती थी।

बच्चा जब-जब पीढ़े पर पौढ़ाया जाता तो माता पाती थी कि बच्चे के दायें हाथ में जाने कहां से भस्मी-सी झरती रहती है। वह प्रायः अपने कर से अपने मुख पर भी भस्मी लेपन कर लिया करता था। माता के पास इसके अतिरिक्त कोई चारा भी न था कि वस्त्र से उस अदृश्य से आयी भस्मी को साफ कर दे। नामकरण वाले दिन उस बालक की राशि के अनुसार पहला अक्षर 'स' निकला और दादा जी तथा पुरोहित जी के मतानुसार प्रभु का नाम "सत्यनारायण" रखा गया। परिपाटी के अनुसार पण्डित जी ने जब उस शिशु के कान में धीरे से उसका नाम उच्चारण किया तो वह शिशु मन्द हास्य कर उठा।

शैशव वैचित्र्य

थोड़ा बड़ा होने पर भगवान अर्द्धनारीश्वर सत्य साई बाबा अपने भाल पर कुंकुम लगाने के लिए हठ किया करते थे, कभी बहनों के प्रसाधनों से उठाकर स्वयं ही रोली आदि लगा लिया करते थे। घर के लोग उनके इस लड़कियों जैसे व्यवहार पर हंसा करते थे। कौन जानता था कि उस शरीर में निवास करने वाली शक्ति स्वयं ही अपना श्रृंगार कर अपने उपस्थित होने का संकेत कर रही है?

भगवान सत्य साई बाल्यकाल से ही सामिष आहार बनाये जाने के स्थानों से दूर भाग जाया करते थे, पशु वध स्थलों के निकट भूल कर भी नहीं जाते थे। जिन स्थानों पर बैल की दौड़ आदि का कार्यक्रम हुआ करता था तथा जहाँ उन पर अत्याचार होता था वहाँ दर्शक के रूप में भी जाना उन्हें स्वीकार नहीं था। घर के अन्य जनों के प्रयास करने पर भी वह उन स्थानों से दूर रहा करते थे। गाँव के व्यक्ति उस बच्चे की विशेषता को अनुभव करते थे और कहा करते थे "यह तो ब्राह्मण बच्चा है। कैसा अद्‌भुत है यह बच्चा? सबसे ही अलग।" बच्चों में खेल होता था—सदा ही सच्चाई के साथ खेलना, किसी के रूठ जाने पर भी स्वयं खेल से न भागना, चाहे दूसरे सत्यनारायण को मार बैठे परन्तु कभी भी अपने सहयोगियों को न मारना उनका जन्मजात स्वभाव था।

बालक सत्य में एक और भी विशेष आदत थी जिसके कारण घर वालों को विशेष परेशानी हुई। जब भी किसी याचक को मांगते देखते तो अपने घर की ओर दौड़ते आते और जो भी उपलब्ध हो सकता था उस वस्तु को देने का प्रयास करते थे। भला यह कैसे सम्भव हो सकता था कि ग्राम में आने वाले प्रत्येक याचक को ही राजू के परिवार के द्वार से कुछ न कुछ मिलता रहे। याचक जब पा जाते थे तो उनको पुनः उस द्वार पर आने की भी

सदा स्मृति रहती थी और इस प्रकार याचकों की एक अच्छी संख्या श्री सत्य के कारण द्वार पर आने लगी। माता ने बालक को समझाया, "बेटा? भला सबको भी कहीं इस प्रकार देते रहते हैं। देखो! कुछ को दिया करो। और तुम तो जो भी हाथ में आता है, वही दे देते हो, यह ठीक नहीं।" माता की कही सीख सुन लेना तो ठीक है परन्तु औधड़ दानी शिव मानव देह में आने पर भी अपनी देने की आदत न छोड़ सके और उसके कारण घरवालों की डाँट यदा-कदा खाते ही रहे। एक दिन माता ने बच्चे की आदत को छुड़ाने के लिए ही कहा, "देखों! यदि तुमने अब याचक को भोजन दिया तो तुम्हें भोजन नहीं मिलेगा।" बालक सत्य माता के आदेश को सुनते ही रहे। फिर किसी याचक के आने पर उसे जो मिला भिक्षान्न को दे आये और स्वयं ही भोजन करने के समय माता से दूर रहे। कार्य की व्यस्तता में माता भूल गई कि आज सत्यनारायण ने भोजन नहीं किया। जब थोड़ी देर बाद उन्हें याद आई तो उन्होंने बड़े लाड़ से अपने सत्य को बुलाया और अंक में भरती हुई बोली, क्यों सत्य आज भोजन नहीं करोगे क्या? नन्हें मुन्हें सत्य ने अपने छोटे-छोटे हाथ माता के आगे कर दिये, "देखो! मेरे हाथ को सूंघो, मैंने खा तो लिया है। एक वृद्ध साधू मेरे लिए दूध और चावल लाये थे। मैंने वह खा लिए हैं क्योंकि तुमने आज भोजन न देने का कह दिया था।" माता ने बालक की प्यारी बात सुनी और प्रमाण में उसके हाथों को सूंघा। तब भी बालक सत्य को नखाग्र से घृत और दूध की सुगन्ध आ रही थी। माता अपने इस लाड़ले से पहले ही चमत्कृत रहा करती थी। आज तो बस अपलक उसे देखती ही रही। फिर बालक को स्नेह से वक्ष से लगा खेलने के लिए छोड़ दिया। यह कैसा विचित्र बालक है, सब कुछ कैसें होता है? इन सबका उत्तर माता को कौन देता?

एक दिन रामनवमी का पवित्र त्यौहार मनाया जा रहा था। गाँव के बालक सत्य को श्रद्धा की दृष्टि से तो देखते ही थे परन्तु आपस में एक दूसरे से उसका वर्णन करते हुए उसे गुरू सम्बोधित किया करते थे। वह गुरू है, कविता बना सकता है, गाना अच्छा गा सकता है और कौन-सा काम—चाहे वह खेल का हो या पढ़ने का—जो वह ठीक से नहीं कर सकता और जिसको

न आता हो उसको वह सिखा नहीं सकता? उस दिन बच्चों ने अपने गुरू को विवश करके उसके लिए जो उचित स्थान समझा वहां बैठा दिया। गाँव की प्रथा यह थी कि एक बैलगाड़ी में भगवान श्री राम की मूर्ति अथवा चित्र रख कर उस गाड़ी को गाँव के चारों ओर घुमाया जाता था और उस गाड़ी के आगे बच्चों तथा बड़ों की टोलियां नाम-संकीर्तन करती हुई चला करती थीं। आज बच्चों ने श्री सत्य को श्रीराम के चित्र के निकट बैलगाड़ी में बैठा दिया था और वह उत्साहित दल हरि कीर्तन करता हुआ गाँव का भ्रमण कर रहा था।

बालक सत्य के घर में बहनों ने देखा आज बहुत समय से सत्य दिखाई नहीं दिया, तो खोजने लगीं, परन्तु सत्य कहीं भी किसी के घर भी न मिला। सब ही चिन्तातुर हो उठे, तभी किसी ने एक आते हुए बच्चे से मालूम किया, अरे! तुमने हमारे सत्य को देखा है क्या? बच्चे ने उत्तर दिया, सत्य, गुरू, हाँ हाँ। अरे वाह उसका तो जलूस ही निकाला जा रहा है। बहनें और भाई दौड़कर वास्तविकता को जानने के लिए जलूस तक गये। देखा शान्त मुद्रा में श्री सत्य भगवान श्रीराम के चित्र के पास सानन्द बैठा है। निर्निमेष नेत्रों से कीर्तनियों को निहराता हुआ! कैसी विचित्र मुद्रा थी बच्चे की। मानो भाव समाधि में तल्लीन था बाल शिव।

जब बच्चों ने घर आकर सूचना दी तो ममतामयी माता ने संतोष की सांस ली। शून्य में निहारती माता ईश्वरम्मा सोचा करती थी...यह कौन आया है कोख से। कौन सी विचित्रि शक्ति आयी है इस घर में, जिसने मुझे ही नहीं सबको ही व्योमोहित कर रखा है; परन्तु बुद्धि से समझने का प्रयास विफल था।

बालक सत्य बड़े होते गये। ग्राम की पाठशाला की पढ़ाई समाप्त कर ली गई। ज्ञान रूप भगवान शिव बिना प्रयास के ही केवल गुरूजनों को सम्मानित करने के लिए विद्याध्ययन कर रहे थे। अध्यापकगण उस बालक की मेघा शक्ति पर आश्चर्य किया करते थे। जब सत्य ने ग्राम पाठशाला में होने वाली पढ़ाई समाप्त कर ली तो उनको ग्राम से ढाई मील की दूरी पर बुक्कापत्तनम नामक बड़े कस्बे की पाठशाला में भेजे जाने का कार्यक्रम निश्चित हुआ। श्री सत्य पाठशाला जाने लगे और फिर चाहे कड़कता शीत हो या

भंयकर वर्षा, वह सदा ही ठीक समय पर पाठशाला पहुँच जाया करते थे। कभी-कभी तो कमर-कमर तक पानी भर जाता था परन्तु बालक सत्य को कभी देर नहीं होती थी। पाठशाला में पहुँच कर अपने सहपाठियों को एकत्रित करके किसी स्थान पर कोई मूर्ति रख उसकी पूजा करते रहना, पुष्पों आदि से किसी चीज को सजाकर नाम संकीर्तन करना ही सत्य की दिनचर्या रहा करती थी। उस पूजा के पश्चात् सब बच्चे जानते थे कि उनका गुरू श्री सत्य अपनी इच्छानुसार जो भी चाहे उनको देगा। हास्यमुद्रा में सत्य अपने थैले में हाथ डालते और फिर उसमें से निकाल-निकाल कर मीठी गोलियां, लैमनड्राप्स, टाफियां आदि बच्चों को बांट दिया करते थे।

बच्चों को, सत्य के सहपाठियों को भला यह जानने का क्या काम था कि सत्य यह सब कहां से प्राप्त कर लेता है? कभी किसी समझदार बड़े बच्चे ने पूछा डी था—सत्य, भला यह तो बताओ तुम यह सब अपने थैले में कहां से निकाल कर लाते हो? तुम्हारे थेले में तो सब कुछ रहता नहीं, फिर यह कहां से आ जाता है? सत्य ने उत्तर दिया था...एक ग्राम शक्ति मुझे जानती है...वह मेरे पास आया करती है और मेरा कहना मानती है...जो भी मैं चाहचा हूं वह मुझे दे जाया करती है बस! बच्चों को बहलाने के लिए उन अवतारी सत्य के यह वचन पर्याप्त थे।

आज भी भगवान सत्यसाई के दर्शन करने का सौभाग्य जिन लोगों को प्राप्त हुआ है, वह सब जानते हैं कि भगवान की दृष्टि—नेत्र खुले रहने पर भी—कहां रहती है कुछ समझ नहीं आता। बाबा सामने देखते हैं परन्तु यह समझ में नहीं आता पड़ता कि कहां देख रहे हैं। अपनी ओर देखने पर भी महसूस होता है—बाबा न जाने कहां हैं। और कभी-कभी ऐसा लगता है—जैसे हमारे अन्तराल को ही पढ़ रहे हैं। बस कुछ ऐसे ही भाव से वह एक दिन अपनी कक्षा में बैठे थे। शिक्षक महोदय को भास हुआ कि बालक सत्य का मन कहीं और है तथा वह जो कुछ लिखाया जा रहा है यह सब कुछ लिख भी नहीं रहा। उन्होंने सत्य से प्रश्न किया—तुम लिख क्यों नहीं रहे हो? नम्रता पूर्वक बालक ने उत्तर दिया—"गुरू जी मुझे वह सब याद है जो आप लिख रहे हैं, यदि आप आज्ञा दें तो सुना दूं।" सन्तोषप्रद उत्तर देने

पर भी अध्यापक को लगा जैसे सत्य के कारण कक्षा का अनुशासन ढीला हो जायेगा। उन्होंने सत्य को आज्ञा दी—स्टूल पर खड़े हो जाओ क्योंकि तुम काम नहीं कर रहे हो।

श्री सत्य अध्यापक जी की आज्ञानुसार स्टूल पर खड़े हो गये। विरोध अथवा अवज्ञा उसकी प्रकृति में थी ही नहीं। कक्षा में पढ़ाई चलती रही। सहपाठियों का मन क्षुब्ध हो उठा था—उन्हें एक-एक क्षण अपने गुरू का स्टूल पर खड़े रहना असहनीय था, परन्तु विवश्ता थी। घण्टा बजा और दूसरे घण्टे में पढ़ाने वाले श्री महबूब खान साहब नामक अध्यापक कक्षा के बाहर से अन्दर आये। जिन अध्यापक महोदय ने श्री सत्य को स्टूल पर खड़ा किया था वह अब भी अपनी कुर्सी पर बैठे हुए थे। श्री महबूब खान ने जब उनको उठते न देखा तो अन्दर आकर उनसे कक्षा के बाहर जाने को कहा। उन अध्यापक महोदय ने धीरे से महबूब खान से कहा—मास्टर साहब, क्या बताऊं खड़ा होता हूं तो कुर्सी भी चिपकी सी मेरे साथ उठती है। क्या हो गया जाने? क्या करू? तभी किसी तेज कान वाले विद्यार्थी ने भी कह दिया—मास्टर जी, सत्य को बिठाइये, वरना आप चिपके ही रहेंगे। मास्टर महबूब साहब ने भी सत्य को खड़ा देखा तो दंग रह गये। क्योंकि यह पहला अवसर था कि किसी अध्यापक ने सत्य को स्टूल पर खड़ा करने की कठोरता बरती हो।

बालक सत्य को बैठ जाने के लिए इशारा किया गया। वह नीचे उतरे और इधर मास्टर जी से चिपकी हुई कुर्सी ने भी मास्टर जी को मुक्त कर दिया। घबराये से मास्टर जी कक्षा से बाहर निकल गये। समस्त विद्यार्थियों ने भी शांति का सांस लिया। बालक सत्य पूर्व के भाव से बिना विषाद अपने स्थान पर विराजमान थे।

अभी? कुछ दिन पहले एक दिन भगवान सत्य साई ने किसी से पूछने पर कहा था—नहीं नहीं, उस अध्यापक महोदय के प्रति मेरे मन में दुराव नहीं था—मुझमें किसी के प्रति दुराव नहीं होता। वह तो लीला के प्रारम्भ होने के लिए जो संकेत हुआ करते हैं, उनमें से एक संकेत मात्र था।

मास्टर महबूब खान साहब की सत्य के प्रति [illegible] विशिष्ट थी।

वह उस बालक को अपने पास खड़ा कर लेते और धीरे-धीरे उसके घुँघराले अद्वितीय केशों में हाथ फेरते रहते। अन्तरिक्ष में झांकते से कहा करते थे—सत्य तुम कौन हो? जो कुछ दिखाई दे रहे हो, वह तो नहीं हो, आदि आदि। कभी-कभी अपने घर ले जाकर उनके सामने भोग रूप में किसी हिन्दू विद्यार्थी से मंगा कर खाद्य सामग्री रख दिया करते थे। फिर सत्य को न खाते देख कहा करते—देखो यह सब बर्तन मंजवाकर धुलवाकर ही इनमें हिन्दू हलवाई की दुकान की मिठाई ही रखी है, किसी गन्दे हाथों में यह गई भी नहीं, फिर सत्य तुम क्यों भोग नहीं लगा रहे हो? अध्यापक की शिष्य के प्रति यह भक्ति, बड़े का बच्चे के प्रति यह वात्सल्य, आत्मा की किसी आकर्षण केन्द्र की ओर यह खिंचावट क्यों थी...कौन जाने?

कोई-कोई भक्त कहता सुना जाता है—यह महबूब खान अध्यापक वही शिरडी अवतार वाला मुसलमान फकीर था, जिसने ३२ वर्ष के लगभग शिरडी साई शरीर को पाला, परवरिश किया। वही फिर इस दूसरे अवतार में भी श्री सत्य साई के आकर्षण को न छोड़ तथा अपने कर्मानुसार पुनः उनसे सान्निध्य प्राप्त करने को धरा पर आया था। भक्तों का विचार है, परन्तु वास्तविकता कौन जाने?

नैसर्गिक नृत्य

निकटवर्ती गाँव में अनेक भजन मण्डलियां थीं जो उत्सवों पर भजन के विशेष कार्यक्रम, धार्मिक कथायें और नाटकों का प्रदर्शन किया करती थी। उन गांवों की तरह ही पुट्टपर्ती के निवासियों ने भी एक भजन मण्डली संगठित की। इस मण्डली के कृत्यों का स्मरण कर आज भी ग्रामवासी रोमांचित हो उठते हैं। सत्य इस मण्डली के प्राण रूप थे। मण्डली के सदस्य बच्चे, बड़े जब पीली धोतियां पहन, हाथों में खड़ताल लेकर, पैरों में रूमरझूमर घुँघरू बाँध कर नृत्य की अनेकानेक मुद्रायें बनाते हुए, नाम ध्वनि करते हुए निकलते थे, और ऐसे भाव होते थे...जैसे भक्तों का दल पांडुरंग विट्ठल के द्वारे जाने को निकला है। उसे मार्ग में चलते-चलते देर हो चुकी है। पाँव थक गये हैं। स्वेद बहने लगा है। प्यास लग रही है और विट्ठल का द्वार फिर भी दूर है। बस तभी भक्त पुकारते, आओ स्वामी, विट्ठल प्रभु आओ, अब राह नहीं चलीं जाती, दर्शन दो स्वामी, दर्शन दो।

ऐसे भाव व्यक्त करता हुआ वह पढंरी भजन मण्डल दर्शकों को भाव-विभोर कर देता था। लोगों को लगता था—सचमुच उन्हें चलते देर हो गई है—इनके पांव थक ही गये होंगे—वे भी उनको प्रार्थना में सम्मिलित हो जाते—आओ, स्वामी विट्ठल दर्शन दो। ऐसा भावपूर्ण नृत्य और गायन श्री सत्य और उसकी मण्डली किया करती थी।

नटराज जब स्वयं ही सत्य के रूप में आये हों तो फिर क्या कहना?—और इस बार तो सोने में सुहागा यह भी है कि एक ही शरीर में उनके साथ उनकी आद्या शक्ति भी अवतरित हुई है। शिव और शक्ति, ब्रह्म और माया। इस विचित्र और सामंजस्य काल में, इस अर्द्धनारीश्वर के अवतरण में जितनी भी विचित्र और मनोमुग्धकारी लीलायें हों जायें, सब कम हैं।

एक बार इस मण्डली ने भगवान नरसिंह अवतार की कथा अभिनीत करनें का निर्णय किया। सब प्रबन्ध हो चुका था। दूर-दूर ग्रामों से दर्शक आये थे। श्री सत्य को नरसिंह का ही अभिनय करना था। कथाचक्र चल रहा था—प्रह्लाद बाल भक्त पर संकट आया था—पिता ने उग्र रूप धारण कर पुत्र से कहा था अरे पाखंडी, यदि तेरा भगवान है तो इस अग्नि में तपाये लाल लोहे के खम्बे से लिपट जा; देखूं तेरा भगवान कैसे तुझे बचाता है? यदि तु बच गया तो समझूंगा कि तेरा भगवान है। और प्रह्लाद उस रक्तिम अग्नि-शिखा जैसे खम्बे की ओर बढ़ रहे थे—उसका अलिंगन करने के लिए। तभी—

मंच के पार्श्व से नरसिंह रूप में बालक सत्य स्टेज पर कूदा। यही उसको करना था परन्तु दर्शक स्तब्ध थे—यह क्या हो गया—यह क्या हो रहा है—क्योंकि सत्य वास्तव में ही नरसिंह बन उठे थे। उनकी मुखाकृति विकृत होकर मानव से सिंह होती जा रही थी। भंयकर मुख, दन्त और रक्तिम नेत्र। उनके हाव-भाव कितने भंयकर हो उठे थे यह तो प्रत्यक्षदर्शी ही अनुभव कर पाये होंगे। लेकिन सुना यह गया कि दर्शकों का चीत्कार निकल गया और दुर्घटना समझ, कई बलशाली युवक उस बालक को सम्भालने मंच पर दौड़े परन्तु आज नरसिंह भगवान को सम्भालना सम्भव न हो सका। बड़े-बड़े पहलवान उस साधारण बालक को वश में न कर सके। तब ग्राम के बड़े-बूढ़े ही काम आये और उन्होंने परामर्श दिया कि उनकी आरती उतारो पूजा करो।

बालक सत्य की अर्चना, पूजा, आरती की गई। मंगल थाल सजाकर कपूर और धूप आदि की सुगन्ध की गई। तब धीरे-धीरे श्री सत्य स्वाभाविक अवस्था में आये। उसी नरसिंह अवतार नाटक की स्मृति आज भी पुट्टपर्ती गाँव निवासियों और पास-पड़ोस से आये दर्शकों के मानस पटल से विस्तृत नहीं होती। इस घटना से श्री सत्य के विषय में दूर-दूर तक अद्भुत बालक होने का प्रचार हो गया। पुट्टपर्ती की भजन-मण्डली को अन्य स्थानों से आमन्त्रण आने लगे।

नटराज का नृत्य कौशल इस युग में कई बार दृष्टिगोचर हुआ है। उनका

ताण्डव नृत्य तो आज भी चर्चा का विषय बना रहता है। एक बार एक नाटक कम्पनी उस क्षेत्र में आई। उसके द्वारा प्रस्तुत नाटकों की धूम सारे क्षेत्र में मच गई थी। कम्पनी में एक बालिका थी—ऋक्ष्येन्द्रमणि। उसका नृत्य विचित्र था, आकर्षक था। और मनोमुग्धकारी नृत्य को देखने के लिए पास-पड़ोस के दर्शकों का तांता लगा रहता था। वह बालिका थाल में दीप जलाकर अपने हाथों पर रखती थी, नृत्य करते-करते ही पृथ्वी तक निज शीश ले जाती परन्तु फिर दीपक जलते रहते—ठीक उसी प्रकार रखे रहते। सर्कस का काम भी जिन लोगों ने देखा है वह भी इस प्रकार के नृत्य को देख कर आश्चर्य करते थे।

बालक सत्य ने भी अपनी बहनों के साथ उस बालिका ऋक्ष्येन्द्रमणि का नृत्य देखा और घर पर आकर हंसते-हंसते अपने पैरों में घुंघरू बांध कर अभ्यास करने लगा। बहनों ने जो अपने भाई को देखा तो दंग रह गयीं क्योंकि सत्य का नृत्य तो उस ऋक्ष्येन्द्रमणि के नृत्य से भी अधिक उत्तम था। बात बहनों से दूसरों ने भी सुनी और उस समय पड़े अकाल में सहायता करने के लिए एक नाटक खेलने का आयोजन किया। एक ग्राम निवासी ने जोश में आकर अधिक जनता को एकत्रित करने के लिए ही यह घोषणा भी करा दी कि इस नाटक में ऋक्ष्येन्द्रमणि का नृत्य भी होगा। विज्ञापन देखकर प्रबंधक परेशान हो गये। क्योंकि इस प्रकार के झूठ के लिए क्या कहा जा सकेगा? फिर भी नाटक तो करना ही था और नाटक का निश्चित दिन भी आ पहुंचा। कोई उपाय न देख बालक सत्य को ऋक्ष्येन्द्रमणि के समान ही सजाया गया, बालिका जैसी पोषाक पहनायी गयी और मंच पर उपस्थित कर दिया गया।

ता तिरकिट थई, ता तिरकिट थई। तबले पर थाप पड़ी और श्री सत्य के पाँवों में घुंघरू घनघना उठे।

'पग घुंघरू बांध साई नाचा रे'

साई नाच उठा,सत्य साई नाच उठा, भगवान शंकर का कलियुग में हुआ दूसरा अवतार मंच पर नाच उठा, ऋक्ष्येन्द्रमणि के रूप में। जनता ने देखा

रंगमंच पर ऋक्ष्येन्द्रमणि ही नाच रही है—जितना कौशल ऋक्ष्येन्द्रमणि अपने नृत्यों में जनता को दिखा चुकी थी उससे कहीं अधिक बालक सत्य दिखा रहा था और फिर सत्य ने ऋक्ष्येन्द्रमणि से अधिक गरिमा वाला नृत्य कर दिखाया। पृथ्वी पर रखी हुई सूई को पलकों से उठाया, हाथ के दीपक थाल में स्थिर थे, ज्योति जगमगा रही थी। बालक सत्य के श्री मुख पर स्वेद कण मोतियों की तरह चमक उठे थे।

जनता आवाक्, अपलक, स्तब्ध होकर नृत्य देख रही थी। उन्हें स्वप्न में भी भान नहीं हुआ कि मंच पर नृत्य करने वाली बालिका नहीं,सत्य है। नृत्य की समाप्ति पर अनेक जनों ने बालिका के नाम से पुरस्कार दिये। बालक सत्य पुरस्कार पाते हुए बड़ी मुश्किल से अपनी हंसी रोक पा रहे थे। इस प्रकार उस दिन का नाटक और नृत्य समाप्त हुआ।

माँ ईश्वरम्मा ने विस्फारित नेत्रों से सब कुछ देखा था। जब मंच से वापस सत्य मां के अंक में आये तो स्नेह से लज्जित माँ ने बच्चे को वक्ष से लगा लिया। उसे भय था कि कहीं मेरे लाल को नजर न लग गयी हो और मां का भय शतप्रतिशत ठीक निकला। प्रातःकाल जब सत्य सोकर उठे तो उनकी दोनों आँखें सुर्ख अंगारे की तरह लाल हो रही थी उन्हें ज्वर भी हो रहा था। माँ दिन भर चिंतित रहीं परन्तु उसी रात्रि को मां ने सुना, कोई खड़ाऊँ पहने कमरे में आया और बालक सत्य तक आकर न जाने क्या किया और चला गया। सहमी हुई माता चुपचाप रही—परन्तु प्रातःकाल उन्हें यह देखकर हर्ष हुआ कि सत्य की आँखें पहले की तरह बिल्कुल ठीक हो गयी थीं तथा ज्वर भी समाप्त हो गया था।

उत्पीड़न वहन

बालक सत्य के अगणित लीला कलापों को गिनना असम्भव है—'हरि अनन्त हरि कथा अनन्ता' के अनुसार ऐसा होना भी चाहिए। परंतु अब चमत्कारों के अतिरिक्त अवतार के प्रकट होने का समय आ गया था। सन उन्नीस सौ चालीस की घटना है—श्री सत्य साई चौदह वर्ष के होने वाले थे। एक दिन संध्या को अचानक ही श्री सत्य नारायण "हां" शब्द कहकर अचेत हो गये। सब ही घबरा उठे। भाभी ने समझा कि सत्य को कदाचित् बिच्छू ने काट लिया और उस गाँव के बिच्छू के काटने से जीवन शेष नहीं रहता था, इतना विषैला बिच्छू उस क्षेत्र का होता है। सब ही दौड़ पड़े, परन्तु जब तक सत्य के भाई श्री शेषम राजू आये तब तक सत्य ने अपने नेत्र खोल दिये थे। उनको चेतन अवस्था में देख कर सबकी जान में जान आई।

दूसरे दिन संध्या को फिर उसी प्रकार से श्री सत्य अचेत हो गये। लोगों ने कहा, यह देवी मुत्यालम्मा का प्रकोप होगया है उनकी भेंट चढ़नी चाहिए। पूजा की सामग्री भेजी गई। अभी मन्दिर से अर्चना करके लोग वापस भी नहीं आये थे कि सत्य होश में आ गये और उन्होंने कहा कि पूजा हो गई, नारियल के तीन भाग हो गये और जब लोगों ने आकर बताया तो सत्य की बात ठीक थी। सत्य के इस प्रकार अचेत होने को बड़ी गम्भीर घटना मानी गई। यद्यपि आज भी बाबा शरीर को प्रायः छोड़ कर चले जाते हैं परन्तु आज तो भक्तों को ज्ञान है कि बाबा किसी भक्त के पास विशेष कृपा दर्शाने हेतु, अपनी उपस्थिति से उसे धन्य करने हेतु गये हैं और भक्त आज उनके अचेत हो जाने से चिंतित नहीं होते। श्री सत्य अक्सर अचेत होने लगे। अचेत अवस्था में कभी-कभी वह महापण्डित के सामने प्रवचन किया करते थे। उनके मुख से धारा प्रवाह श्लोक और संस्कृत सुनकर लोग स्तब्ध रह जाते थे। उनके विषय में सुनकर अनेक जन उन्हें देखने आते परन्तु श्री सत्य की स्थिति समझ से परे थी। अब ग्राम वासियों ने और सम्बन्धियों ने कहना शुरू किया

कि किसी प्रेत की छाया इस बालक पर है या किसी ब्रह्मभूत का प्रभाव इस बच्चे पर होगया है। उनकी दृष्टि की पहुँच—उनकी कल्पना की उड़ान—जहां तक हो सकती थी वहीं तक उन्होंने कहने का साहस कर लिया, परन्तु—-

एक दिन किसी सज्जन ने एक महाशक्तिशाली शक्तिपूजन का पता बताया। जिसके विषय में प्रसिद्ध था कि उसको देखते ही भूत-प्रेत भाग जाते हैं। कौन-सा रोगी ऐसा है जिसको वह ठीक नहीं कर सकता। वस एक ही बात थी कि वह रोग को ठीक करने से पहले रोगी को अपने अधिकार में ले लेता था और फिर उसके उपचार करने के मध्य कोई भी उसके काम में दखल नहीं दे सकता था। ब्रह्मणपल्ली नामक गाँव में उस शक्तिपूजन के पास जब श्री सत्य को ले जाने लगे तो पहले तो बैलगाड़ियों के बैलों ने ही मार्ग पर चलने से मना कर दिया, फिरकिसी प्रकार बैलों को चलाया गया तो साथ में जाने वालों की तबियत खराब हो गई। किसी को ज्वर तो किसी को पेट में दर्द, लोगों ने बड़ी विचित्रता अनुभव की। परन्तु सत्य को ठीक कराने के लिए शक्तिपूजक के पास जाना तो था ही। और किसी प्रकार यह दल वहां पहुँचा।

शक्तिपूजक, एक भयंकर कालपुरुष के समान कालाकलूटा, बोलना भंयकर, देखना भंयकर, उसकी हर बात भंयकर। अगर उसकी यह सब बाते न होतीं तो भला उसको तांत्रिक सम्राट ही कौन कहता और फिर लोग भूत भगवाने ही क्यों आते? सबसे पहले उसने श्री सत्य के समक्ष एक बकरे और एक मुर्गी की बली देकर उसके चारों ओर उन मूक पशुओं के रक्त से चक्र बनाया—फिर न जाने क्या-क्या पदार्थ जलाकर उसने धुँए के सहारे और भैरव और काल भैरव जैसे नाम लेकर देवताओं का आह्वान किया। अस्पष्ट मत्र बोलते हुए—उसने अपना पुरूषार्थ, अर्जित पराक्रम लगा दिया परन्तु उस तांत्रिक के बुरी तरह से मारने पर भी सत्य निश्चल रहे। बिना किसी प्रकार के भाव के वह तांत्रिक इस बात पर उतर आया था, कि आज वह इस ढीठ बच्चे की पसली-पसली एक कर देगा। परन्तु उसके क्रोध से, पाश्विक कृत्य से, श्री सत्य पर कोई प्रभाव न होना था और न हुआ। घर के लोगों का कलेजा मुँह को आया जाता था। उनसे यह दुःख देखा नहीं जा रहा था परन्तु उस तांत्रिक की शर्त ही यह थी कि उसके काम में कोई बाधा न दे।

उस निर्मम मनुष्य ने, जिसको मनुष्य कहना भी उचित नहीं, श्री सत्य का सिर तेज औजार से मूंड़ दिया। फिर सिर पर उस ही औजार से त्वचा को काट दिया। सब कुछ हो रहा था और सब विवश थे, सत्य शान्त थे। अभी भी बच्चे को शान्त देखकर उसने एक नीबू लिया और उसको निचोड़ कर सिर पर हुए जख्मों में रस डाल दिया। श्री सत्य अब भी शान्त थे। इस शान्ति से तो वह तांत्रिक बौखला ही उठा। उसके क्रोध का पारावार न रहा—क्रोध के भंयकर प्रवाह के कारण वह थर-थर कांप रहा था। आज उसके पूरे तंत्र-व्यापार को ही चुनौती सी दे रहा था यह बालक और उसे अपना भविष्य अन्धकारमय दीख रहा था। उसने अपना अन्तिम ब्रह्मास्त्र प्रयोग करने का निर्णय किया तो घर के लोग अपना साहस खो बैठे। उन्होने प्रार्थाना की—हम अपना पैसा भी वापस नहीं लेगें—हमे बच्चा इसी दशा में दे दो, हम चले जायेगें। हमें अपना बच्चा ठीक नहीं कराना है—परन्तु तांत्रिक महाशय को तो रोजी का, अपनी सम्पूर्ण मर्यादा का प्रश्न था-उसने बच्चे को बिना ठीक हुए देने से सर्वथा मना कर दिया।

तब नरपशु तांत्रिक चौदह वर्ष के बच्चे पर एक के बाद दूसरा पानी का घड़ा उलटता जाता था और क्षण प्रति क्षण उसका क्रोध द्विगुणित होता जाता था। क्योंकि बालक सत्य अलिप्त भाव से मन्द-मन्द हास्ययुक्त बैठे थे जैसे कुछ हो ही नहीं रहा हो। तांत्रिक के अन्तिम प्रयोग का नाम था कलिकम-कलिकम अर्थात् दस बारह जड़ी बूटियों से, जिनमें जलन, दाह और कटाव का गुण होता है, मिलाकर बनाया हुआ एक द्रव्य उस द्रव्य को, अपने भंयकरतम अस्त्र को लेकर तांत्रिक आया और उसने श्री सत्य के नेत्रों में उस पदार्थ को डाल दिया। डाल देना शब्द न कह कर यदि कहें कि उड़ेल दिया तो अति उत्तम होगा—श्री सत्य की आंखों का रंग बदल रहा था—लाल सुर्ख अंगारे की तरह आँखें हो गयी। वह सूज भी आयी थीं—उनसे पानी की धार बह रही थी। पलक और चेहरा विकृत हो रहा था। श्री सत्य अब भी स्थिर भाव से बैठे थे। उनके विकृत चेहरे को देखकर तांत्रिक खुशी के मारे नाचने लगा। उसकी खुशी का कोई ठिकाना नहीं था—वह समझ रहा था-अब तो यह बालक आर्तनाद कर ही उठेगा। अब तो इसके अन्दर बैठा

प्रेत भाग ही खड़ा होगा।

आस-पास खड़े सम्बन्धी और दर्शक दुःख के मारे अश्रु बहा रहे थे, परन्तु उस तांत्रिक को बड़ी प्रसन्नता थी।

तभी श्री सत्य ने उस तांत्रिक को संलग्न देख बहन को इशारा कर अपने पास बुलाया और उससे कहा मैं अभी बाहर जाऊँगा, तुम उस औषधि को अपने पास रखना। बहन को जो औषधि संकेत से उन्होंने समझाई, उसे वह समझ गई और बाहर चली गयी। तभी श्री सत्य किसी बहाने से वहां चले गये और बहन के हाथ से लेकर उस औषधि को अपने आँखों में टपकाया और उस औषधि के प्रभाव से श्री सत्य की आँखें बहुत सीमा तक ठीक हो गयीं।

तांत्रिक ने जब यह जाना कि सत्य की आँखों की पीड़ा किसी औषधि के लगाने से ठीक हो गयी है तो वह बौखला उठा और शोर मचाने लगा—अरे तुमने वश में हुए प्रेत को फिर से भाग जाने का मौका दे दिया, तुम्हारी वजह से ही यह प्रेत इस बच्चे को नहीं छोड़ रहा है, अन्यथा मैं तो आज इसको बाँध ही चुका था, आदि-आदि। घर वालों ने जो कुछ देना निश्चित किया था, उससे कहीं अधिक धन देकर बालक सत्य को उस धूर्तराज से छुड़ाया और पुट्टपर्ती पहुँचे।

बालक सत्य की सहनशीलता देखकर सभी चकित हो उठे थे। उनकी समझ में नहीं आता था कि बालक सत्य कौन शक्ति है। यह किस प्रकार सब कुछ कर रहे हैं। अब सत्य की स्थिति और अधिक परिवर्तित होती गई। प्रायः सत्य शरीर छोड़कर जैसे चले गये हैं, ऐसा प्रतीत होता। उस काल में कौन उनके शरीर में प्रवेश कर गया है, पता नहीं चलता। कभी वह संस्कृत के श्लोक बोलने, कभी पदों की रचना कर सुनने वालों को चमत्कृत कर देते। इतना छोटा बच्चा किस प्रकार से यह सब रचना कर पाता है— सुनने वाले आश्चार्य करते और चुप हो जाते। जितने व्यक्ति आते, उतने ही मत देकर चले जाते।

मोह निराकरण

२३ मई सन् १९४० का दिन आया। प्रतिदिन की भाँति श्री सत्य प्रातः काल ही उठे और स्नान आदि करके अन्य दिनों की भांति चुप नहीं रहे। अचानक ही खिलखिला कर हँस पड़े—हँसते ही रहे—घर के लोगों को तथा अन्य जनों को उनकी यह स्थिति देखकर आश्चार्य मिश्रित भय हुआ। तभी श्री सत्य ने उपस्थित लोगों को अपने दैविक कर से उत्पन्न करके मिश्री तथा पुष्प आदि बाँटने प्रारम्भ कर दिये।

जिसको मिलता था, वह उस अमृत तुल्य स्वाद को बताने के लिए दूसरे से भी कहता और तनिक देर में ही वहाँ भीड़ लग गयी। जब पिता को यह समाचार मिला तो वह अपना संतुलन खो बैठे। उन्होंने हाथ में एक डण्डा उठाया और उस ओर झपटे जहां सत्य बैठे थे। रास्ते में किसी ने पिता से कहा, वहाँ देव प्राकट्य हो रहा है— हाथ पैर धोकर जाओ, परन्तु पेद्दवेंकप्पा सीधे वहाँ चले।

उपस्थित जनों को एक ओर हटाते हुए उन्होंने चिल्लाकर कहा-यह खेल समाप्त हो जाना चाहिए, बोलो तुम कौन हो—शैतान हो या भगवान, यह शिव लीला है या भूत लीला, सच-सच बोल। नहीं तो तेरी खोपड़ी आज चकनाचूर कर दूंगा। पिता का क्रोध अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया था।

शान्त, धीर स्वर में श्री सत्य ने उत्तर दिया—

मैं साई बाबा हूँ।

श्री पेद्दावेंकप्पा राजू के हाथ से डण्डा फिसल गया।

हाँ, मैं साई बाबा हूँ। भारद्वाज गोत्र का साई बाबा। आपस्तम्ब सूत्र का साई बाबा। लोक कल्याण के लिए पृथ्वी पर अवतरित हुआ हूँ, पहले भी शिरडी ग्राम को लीलास्थल बनाकर लीला की थी। इस बार यहाँ लीलास्थली

बनायी है।

तुम्हारे वेंकवधूत ने याचना की थी— मेरे अवतार के लिए और उसकी प्रार्थना पर ही इस वंश में अवतरित हुआ हूँ।

पिता ने बालक सत्य की बातें सुनी और फिर व्यंग्य भाव से पूछा, ठीक है तुम साई बाबा होगे—फिर हम क्या करें?

शीध्र ही उत्तर मिला, मेरी पूजा करो, अर्चना करो।

किसी ने प्रश्न किया, आपकी पूजा कब करें?

उत्तर मिला प्रत्येक बृहस्पतिवार (लक्ष्मीवार) को अपने हृदय और स्थान पवित्र रखो—विशेष पवित्र रखो—और पूर्ण मनोयोग से आराधना करो। कल्याण होगा।

अगले दिन भक्तों का समुदाय ही श्री राजू के निवास स्थान पर एकत्रित हो गया, भजन पूजन आरम्भ हो गया। आनन्द की वर्षा हो रही थी। तभी एक भक्त ने नम्रता से बाबा—निश्चय ही आप साई बाबा हैं, क्या आप हमें अपने साई बाबा होने का प्रमाण देगें? श्री सत्य तनिक भी नाराज नहीं हुए। उन्होंने भक्त से कहा—सामने रखे हुए चमेली के पुष्पों को मेरे हाथों में रखो। भक्त ने द्रोणपात्र से उंड़ेल कर सब पुष्प भगवान सत्य साई की अंजलि में भर दिये। बाबा ने पुष्पों को पृथ्वी पर फेंक दिया—आश्चर्य—महान आश्चर्य—सब उपस्थित जनों ने देखा—पृथ्वी पर तेलुगु शब्दों में लिखा था—साई बाबा।

श्री सत्य नारायण का समय अपने बड़े भाई श्री शेषम राजू, जो उर्वाकोण्डा में अध्यापक थे, के पास व्यतीत हो रहा था। उसका विचार था, सत्य के कथनानुसार वह साई बाबा है, होने दो। प्रत्येक दिन की अर्चना के लिए तो यह कहता भी नहीं- केवल बृहस्पतिवार को अर्चना के लिए कहता है—चलो—सप्ताह में एक दिन पूजा होने दो—उसमें यह लगा भी रहे तो भी यदि एक सप्ताह के शेष दिन पढ़ लिया करेगा तो सरकारी नौकरी के लिए योग्य हो जायेगा। अब उर्वाकोण्डा ग्राम का उत्साह दुगना हो चुका था। प्रत्येक

बृहस्पतिवार को श्री शेषम राजू का निवास साई मन्दिर के रूप में परिवर्तित हो जाता था। उस छोटी अवस्था में भी साई बाबा का उद्घोष करने वाले श्री सत्य अपने भक्तों को, अपने में विश्वास रखने वालों को अपने पास बुलाते थे और उनकी दुःख-दुविधाओं को दूर करते थे; उनको सदुपदेश देकर शान्त करते थे।

श्री सत्य के मानसिक स्थिति को समझने में सब असमर्थ थे। प्रायः श्री सत्य खड़े होकर अन्तरिक्ष को निहारते हुए कहा करते, सब माया है, अस्थिर है। न जाने किसे बोध कराते रहते—न जाने किसे सम्बोधित करते रहते। कोई कुछ भी नहीं समझता था। उन दिनों भी श्री सत्य अपने दैविक हाथ से उत्पन्न करके भक्तों को—शिरडी का खजूर, पूर्व जन्म के शिरडी बाबा का वस्त्र आदि न जाने क्या-क्या अद्भुत वस्तुयें दिया करते थे। उनके विद्यालय के अध्यापक, जिले के जिला निरीक्षक ओर न जाने कौन-कौन अधिकारी श्री शेषम राजू के निवास स्थान पर आते रहते थे—वे सब ही अपनी योग्यतानुसार बालक सत्य से प्रश्न करते, समस्या उपस्थित करते और उस बाल-शिव की विद्वत्तापूर्ण वार्ता से स्तब्ध हो, चमत्कृत होकर ही जाते थे।

जन-जागरण

प्राचीन विजयनगर साम्राज्य की राजधानी हम्फी के खण्डहरों से कुछ मील की दूरी पर आधुनिक हास्पेट नगर बसा हुआ था। उर्वाकोण्डा आकर जिन लोगों ने बृहस्पतिवार का सत्संग लाभ-उठाया था उन लोगों ने अपने क्षेत्र में जाकर साई बाबा के चमत्कारों का वर्णन किया। जिला बल्लानी के कतिपय अधिकारी वर्ग ने, जैसे जिला स्कूल इंस्पैक्टर, हेल्थ आफिसर तथा इंजीनियर आदि ने भी श्री शेषम राजू के पास सूचना भिजवाई कि एक दिन श्री सत्य को वह उनके स्थान पर भी लायें और यहाँ भी भजन-पूजन का कार्यक्रम किया जाये। श्री शेषम राजू ने विचार किया कि चलो इस प्रकार घूमना भी हो जायेगा और बालक सत्य की मानसिक स्थिति पर भी स्थान परिवर्तन का प्रभाव पड़ सकता है। कदाचित लाभ ही हो। इस आशा में वह हम्फी के खण्डहरों को देखने के लिए बालक सत्य को लेकर तथा अन्य इष्टमित्रों सहित वहां गये। नवरात्रि की छुट्टियाँ हो गयी थीं।

हम्फी ने खण्डहर देखे। प्राचीन अश्वशाला, यज्ञशाला, रनिवास, अन्तःपुर आदि अनेक खण्डहर। विगत की स्मृति में धुँधले स्वप्न। स्वर्णिम दिनों की परछाई। वहीं पर मांतग नामक एक पर्वत श्रृंग है। उसमें उत्तर भारत के एक संत तपश्चर्यारत थे। उन्होंने अचानक ही श्री सत्य को उधर देखा तो वह उठकर वहां आये। बड़े स्नेह और दुलार से उन्होंने बालक को स्पर्श किया और कहा, इस बालक को साधारण बालक मत समझो; इसको आदर, प्रेम और भक्ति से पालो। यह दैवी पुँज है, श्रद्धा से समझने का प्रयास करते रहो। इसी में कल्याण होगा। सुनने वाले महर्षि की वाणी से एक बार फिर जीवन में आश्चर्यचकित रह गये।

वहीं निकट भगवान विरूपाक्ष देव का मन्दिर स्थित है। भगवान विरूपाक्ष की अर्चना के लिए जब दर्शक अन्दर जाने लगे तो श्री सत्य साई मन्दिर के बाहर ही एक शिला पर हाथ रखकर अन्तरिक्ष में शून्य में निहारते खड़े रहे। अन्य जनों ने

भी उनको कुछ कहना उचित न समझा और उनको बाहर खड़ा छोड़कर ही मन्दिर में चले गये। अन्दर पुजारी जी ने नारियल फोड़ कर देव को भोग लगाया, थाली में रखा हुआ कपूर प्रज्ज्वलित किया और भगवान विरूपाक्ष की आरती उतारने के लिए प्रकाश पुँज को घुमाया तो दर्शक आश्चर्य के कारण विचलित हो उठे। उन्होंने देखा बालक सत्य अपनी मनोमुग्धकारी मुद्रा में शिवलिंग के समीप खड़ा है और आरती की ज्योति उसके मुखमण्डल को प्रकाशित कर रही है। अभी जिस बालक को बाहर छोड़कर आये हैं, वह शिवलिंग के पास अन्दर कैसे जा पहुँचा यह समझ में नहीं आ रहा था। श्री शेषम राजू अपने आश्चर्य को नहीं रोक पाये, उठकर बाहर गये। देखा बालक सत्य उसी स्थान पर खड़े हैं जहां बाहर उनको छोड़कर गये थे। शिल्पकला का निरीक्षण करते हुए सत्य अविचल थे। श्री शेषम राजू के आश्चर्य की सीमा समाप्त हो चुकी थी। उनकी बुद्धि और विवेक इस आश्चर्य का उत्तर खोजने में असमर्थ थे।

सबने ही इस सत्य को जान लिया कि श्री सत्य ही विरूपाक्ष हैं और भगवान विरूपाक्ष ही सत्य हैं। दोनों में कोई अंतर नहीं है। वह मन्दिर के अन्दर भी है और मन्दिर के बाहर भी है, दोनों स्थानों पर दिखाई दे रहे हैं, यह उनकी लीला है। बात मन्दिर के प्रांगण में हुई थी। परन्तु नगर भर में फैलते हुए तनिक भी देर नहीं लगी। अब समस्त-जनों का संशय नष्ट हो चुका था। प्रत्यक्ष के इस अनुभव को देखने के पश्चात् न किसी को कुछ विरोध में कहने का साहस था, न इच्छा। सबने एक ही स्वर से श्री सत्य के स्वागत में पलक पांवड़े बिछाये। भगवान सत्य साई के स्वागत करने का कार्यक्रम बनाया गया और उस गुरुवार को जब भजन चल रहा था तब श्री सत्य ने एक पुराने क्षय रोगी को अपने पास बुलाया फिर अपने हाथ में भस्मी उत्पन्न करके उस क्षय रोगी को खिलाई, उसके लेपन किया और जनता ने आश्चर्य के साथ देखा कि पुराना क्षयरोगी चमत्कारिक ढ़ंग से स्वस्थ प्रतीत करने लगा था। जो चल भी नहीं सकता था उसको बाबा की विभूति से इतना लाभ हुआ था कि वह बाबा की ही आज्ञा से एक मील पैदल चल कर वापस लौटा।

हम्पी से लौटने के पश्चात् भी बालक सत्य का व्यवहार विचित्र ही रहा। इन दिनों वह कुछ अधिक गम्भीर से होते जा रहे थे। जैसे कुछ होने को हो रहा हो, जैसे कुछ घटित होने जा रहा हो। कुछ दिनों के बाद ही जब बालक सत्य प्रातः अपने विद्यालय को पुस्तक लेकर जा रहे थे, तब उनको जाता देख उनके भक्त उर्वाकोण्डा के एक्साईज इन्स्पेक्टर श्री अंजनीयुलु महाशय भी उनके पीछे-पीछे चले। उन्होंने स्पष्ट ही देखा श्री सत्य के शीश के चारों ओर तेजपुँज चमक रहा है; श्री सत्य के मुखमण्डल के चारों ओर प्रकाशपुंज फैला हुआ है। वह केवल देख रहे थे, कुछ समझने की सुध नहीं थी। श्री सत्य अपने विद्यालय तक गये और श्री अंजनीयुलु भी उनके पीछे-पीछे वहां तक गये। श्री अंजनीयुलु तो वापिस आ गये तथा बालक सत्य भी थोड़ी देर ठहर कर स्कूल से लौट पड़े।

घर पर पहुँचकर, बालक सत्य ने पुस्तकों को एक ओर गिरा दिया और ठिठके। पुस्तकों की ध्वनि से घर में बैठी हुई श्री शेषम राजू की पत्नि अर्थात् श्री सत्य की भाभी बाहर की ओर आयीं। उन्होंने देखा, श्री सत्य के मुखमण्डल के चारों ओर विचित्र और सहन न किया जाने वाला प्रकाश-चक्र स्थित है। उनके मुख की ओर देखना भी कठिन है। उन्होंने व्याकुल हो अपने नेत्र हाथों से बन्द कर लिए। किंकर्तव्यविमूढ़ हो वहीं ठिठक गयीं। तभी श्री सत्य ने उद्घोष किंया—

मैं केवल तुम्हारा ही सत्य नहीं हूँ। मेरे भक्त मुझे पुकार रहे हैं। धर्मस्थापना का कार्य मेरी प्रतीक्षा कर रहा है— माया जा चुकी है। मैं अब जा रहा हूँ।

भाभी ने जो यह शब्द सुने तो स्तब्ध रह गयीं। पहले ही उनके तेज को देखकर हैरान थीं—उनकी बात सुनी तो और भी विचलित हो उठीं। दौड़कर अन्दर घर में जाकर श्री शेषम राजू को स्थिति बतायी। वह भी दौड़ते हुए बाहर आये—उनको देखते ही श्री सत्य ने कहा—

मेरी चिकित्सा का विचार भी छोड़ दो। माया जा चुकी है। मैं केवल तुम्हारा ही नहीं हूँ। मेरे भक्त मेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं। जिस लिए मैं आया हूँ, वह अब आरम्भ हो रहा है।

यद्यपि श्री शेषम राजू उनके शब्दों को सुनकर चकित हो उठे, परन्तु विवशता थी। तभी श्री नारायण शात्री नामक के विद्वान उधर से निकले और उन्होंने भी वही चमत्कार श्री सत्य के वायुमण्डल के चारों ओर देखा—उनके मन में न जाने क्या भाव उदित हुए कि उन्होंने श्री सत्य को साष्टांग प्रमाण किया और नेत्र मूंद कर ध्यान करने लगे। श्री सत्य इसी परिस्थिति में अंजनीयुलु के घर की ओर गए। उनके घर के विशाल उद्यान में ही एक शीला पर बाबा बैठ गये। श्री सत्य ने आज घर छोड़ दिया। श्री सत्य ने आज भी अपने भाई से कह दिया कि वह केवल उनके ही नहीं है,श्री सत्य धर्म स्थापना के लिए संसार में आये हैं, श्री सत्य अंजनीयुलु के उद्यान में शिला खण्ड पर बैठे हैं—सूचनाओं को एक से दूसरे ने सुना और उद्यान की ओर आता गया। जिज्ञासुओं की, भक्तों की और हर एक भाव से आने वालों की भीड़ लगती गयी। आने वाले पंक्तिबद्ध होकर बैठते जा रहे थे, तभी महर्षि भारद्वाज को आशीर्वाद देने वाले भगवान शंकर ने शिरडी के साई रूप में प्रकट होने वाले बाबा ने पुट्टपर्ती गांव में जन्म लेने वाले बालक सत्य नारायण ने, भक्तों के हितार्थ पहली पद्य रचना की। यूं तो बाल्यकाल से ही सत्य पद्य रचना करते थे परन्तु उद्घोष के पश्चात् जो सर्वप्रथम रचना हुई—और जिसको बाबा के कण्ठ स्वर में स्वर मिलाकर भक्तों ने आत्म-विभोर होकर गाया था, वह शब्द थे—

मानस भजरे गुरु चरणम्
दुस्तर भव सागर तरणम्।

संसार को दिया प्रथम आदेश, जीव जागरण के लिए पहला मंत्र; उद्बोधन के लिए अक्षर, कलिकाल की गति मुक्त कराने वेाले प्रथम बीजाक्षर। समस्त उपस्थित जनों ने सानन्द उस ध्वनि को गाया और अपने को भूल गये। आज भी भगवान सत्य साई उन शब्दों को यदा कदा भक्तों से गवाकर प्रथम संदेश का स्मरण कराते रहते हैं।

उस दिन उर्वाकोण्डा में विद्युत की तरह फैल चुका था। विद्यालय के अध्यापक भी आ रहे थे एक दूसरे से कहते हुए—अब सत्य स्कूल नहीं

आया करेगा—विद्यालय के विद्यार्थी सत्य के सहपाठी एक दूसरे को सूचना देते हुए उद्यान की ओर जा रहे थे— वार्ता जो सबके मुँह पर थी—अब सत्य ने घोषित कर दिया है कि वह साई बाबा है—उसका धर्मस्थापना का कार्य प्रारम्भ हो रहा है—अब वह स्कूल नहीं आया करेगा।

कुछ विद्यार्थी और लोग केवल वियोग की कल्पना से क्लान्त होकर वहां पहुंचे, कुछ उस बालक की त्रुटिपूर्ण विचारधारा का परिणाम देखने पहुंचे, कुछ चमत्कारों में अविश्वास रखते हुए भी वहां पहुंचे। ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास और अविश्वास रखने वाले सभी तो वहां पहुंचे। परन्तु सहपाठियों का, शिक्षकों का भाव कैसे शब्दांकित किया जा सकता है। जिन्होंने श्री सत्य की वियोग की कल्पना करते हुए उस दिन धूप, दीप आदि नैवेद्य से भगवान सत्य साई, की पूजा अर्चना की थी; मन में कुछ ऐसे ही भाव थे, आज तक जो साथ बैठता था, पढ़ता था, खेलता था, वह तो हमसे कोई बड़े ही आगे का निकला। अब वह हमारे साथ नहीं रहेगा। किसी के मन में विछोह का दुःख था तो किसी के मन में उद्घोष के कारण हर्ष। हर्ष और दुःख का मिश्रित सा समूह एक दूसरे के स्वर में स्वर मिलाकर गा रहा था।

मानस भजरे गुरू चरणम्, दुस्तर भवसागर तरणम्

बाबा के उद्घोष की सूचना माता-पिता के पास पुट्टपर्ती पहुँची। दोनों ही व्यग्र हो वहाँ पहुँचे। जब माता श्री सत्य के पास उद्यान में पहुँच रही थी तभी बाबा भीड़ को हटाते हुए बोले, देखो मोह माया आई।" माता-पिता ने पहुँचकर बालक सत्य को बहुत प्रकार से समझाया, परन्तु अन्त में श्री सत्य के उद्घोष में विश्वास करना ही पड़ा। फिर भी माता-पिता और बड़े भाई ने नम्रतापूर्वक कहा—"आपके उद्घोष में हमें विश्वास है, परन्तु हमारी एक विनम्र प्रार्थना है, आप पुट्टपर्ती में ही निवास कीजिए। बस यही हमारे लिए सब कुछ होगा।" क्षण भर मौन रह कर बाल साई ने कहा—तथास्तु।"

उर्वाकोण्डा ने भी श्री सत्य को विदाई दी। उर्वाकोण्डा की दी गई विदाई का स्मरण कर आज भी वहाँ के जनों के नेत्र अश्रुपूरित हो जाते हैं। स्थान-स्थान

पर उनके लिए विदाई द्वार सजाये गये थे। सभी तो उनको विदाई देने के लिए उनके साथ चल रहे थे। एक बिछोह, एक पीड़न, एक अलगाव। कल तक पढ़ने वाला श्री सत्य अब साई बाबा बन गया है। अरे, वह तो भगवान सत्य साई बाबा है। अब वह जा रहे हैं, उस स्थली की ओर जहाँ उन्हें आगे की लीला करनी है। मंत्र जड़ित से लोग चले आ रहे थे, साई को विदा करने, कुछ ग्राम के सीमा छोर तक गये और अश्रुप्लावन करते लौट आये। कुछ पुट्टपर्ती भी गये, और इस प्रकार श्री सत्य साई उर्वाकोण्डा में उद्घोष करने के पश्चात् अपने जन्मस्थल पुट्टपर्ती ग्राम वापिस आये।

ओ३म् श्री सत्य साई बाबाय नमः

"यह मेरा कर्तव्य है कि मैं जहाँ कहीं भी रहूँ कुछ भी करता रहूँ, मेरा भक्त जब मुझे पुकारे तभी उसको सान्त्वना देने के लिए जाऊँ।"

प्रशान्ति निलयम् की ओर

पुट्टपर्ती में जिन्होंने जन्म लिया थां, वही श्री सत्य साई लीला हेतु—निज जन्म स्थली पर पुनः लौट आये थे। गाँव लौट कर भी श्री सत्य का अधिकांश समय श्री करणम और भक्त सुबम्मा के स्थल पर व्यतीत होता था। श्रीमती सुबम्मा की श्रद्धा, उनका बाल साई के प्रति अगाध विश्वास अपरमित था। अब अकेला बृहस्पतिवार को ही सत्संग और कीर्तन होता हो ऐसी बात नहीं थी, बल्कि प्रत्येक क्षण ही श्री सत्य साई के वचनामृत का पान कर दूरस्थ प्रदेश के आने वाले पूर्ण आनन्द लाभ करते थे। थोड़ा सा समय बीतते-बीतते वहाँ भक्तों की संख्या इतनी अधिक होने लगी कि सत्संग-स्थान कम पड़ने लगा, तब श्रीमती सुबम्मा ने घर के सामने वाले स्थान पर टीन की छाया डलवाई। आज भी पुराने प्रशान्ति निलयम के नाम से उसको सम्बोधित किया जाता है।

दूर-दूर के गाँवों से भक्तजन सत्संग में सम्मिलित होने आते थे। श्रीमती सुबम्मा को घर में बैलगाड़ी खड़ी करने तक को स्थान न रहता। कभी-कभी जब साई बाबा पवित्र चित्रावटी के तटों पर चले जाते, या किसी एकान्त शिला पर जा बैठते, तब माता ईश्वरम्मा और श्रीमती सुबम्मा हाथ में भोग हेतु खाने की सामग्री लेकर उन्हें ढूंढ़ती फिरती थीं, जैसे गऊ अपने बछड़े की खोज करती फिरती है।

पास-पड़ोस के गाँव से श्री सत्य साई को आमंत्रण आते रहते थे, और बाबा कृपा कर सत्संग हेतु उनके आमंत्रण को स्वीकार करते थे—एक दिन जब अनेक बैलगाड़ियों का समूह भक्त मण्डली को लेकर समीपवर्ती किसी गाँव को जा रहा था, अचानक ही बाबा एक क्षण को आँखों से ओझल हुए और तभी एक षोडशी वहाँ दिखाई दी—भक्तों को सम्बोधित कर वह बोली—मेरा पति धर्मावरम् के अस्पताल में बीमार है। मेरे पैर में चोट है मुझे गाड़ी में बिठा लीजिये। उस युवती को वहाँ देखकर सब चकित हुए। युवती

को गाड़ी में बिठा लिया गया। अभी यह प्रकरण चल ही रहा था कि यात्रियों ने पाया, श्री सत्य साई वहाँ नहीं हैं। सब ओर खोज की गई, परन्तु वह नहीं मिले, भक्तजन उद्विग्न हो उठे। तभी गाड़ियों के पाश्रव से श्री सत्य साई आ गये। भक्तों में से किसी वरिष्ठ-जन ने उनको बिना कहे ही चले जाने के लिए डांटा भी। अब देखा तो वह युवती गायब थी। उसकी खोज की गई, परन्तु वह वहाँ थी ही नहीं। बाबा मन्द-मन्द मुस्कराते बैठे थे। तब उस युवती की खोज निराश हो सबने श्री सत्य साई से पूछा। बाबा ने मुस्कराते हुए कहा, पहचाना नहीं, मैं ही तो तुम्हारी परीक्षा ले रहा था—देखें दुःखी जन की तुम लोग सहायता करते हो या नहीं। अनेक रूप धर भक्तों के मन को समझना उनके लिए क्या कठिन है?

चित्रावती के तट पर दो पहियों के मध्य आज भी एक इमली का वृक्ष खड़ा है। भक्तगण आज भी उसके दर्शनार्थ वहाँ जाते हैं। उस वृक्ष के तले दो-चार व्यक्तियों के बैठने भर को स्थान है, वहीं श्री सत्य साई प्रायः जा बैठा करते थे, उनको न पाकर ढूंढ़ते हुए जब भक्तगण वहाँ पहुँचते, तब भक्तों की कामना के अनुसार उस वृक्ष पर से अनेकानेक फल तोड़, बाबा उन्हें दिया करते थे। भक्तों ने कहा, बाबा यह कल्पवृक्ष है—तब बाबा ने बताया, नहीं, यह संकल्प वृक्ष है। किसी भी वृक्ष को ऐसा बना सकता हूं। आज यह लोग जिन्हें उस एक ही वृक्ष के नीचे से आम, सेब, अमरूद और न जाने क्या-क्या फल और मिठाइयाँ खाने को मिली हैं—उन वस्तुओं के स्वाद का वर्णन करते हुए नहीं अघाते हैं।

एक दिन दूर गाँव से आये भक्तगण भोजनादि से निवृत होकर आराम कर रहे थे, सामने ही बाबा एक पेड़ में पड़े हुए एक झूले पर बैटे झूल रहे थे। तभी लेटे हुए भक्तों का बाबा ने आवाज दी, देखो, भक्तों ने सचेत होकर देखा, वृक्ष की डाल में जो झूला था और जिस पर अभी श्री सत्य साई आधी बाहों की कमीज पहने बैठे थे, वहाँ अब मुरली लिये, मोर मुकुट धारण किये, उर में वैजयन्ती पुष्पों की माला पहने श्री कृष्ण विराजमान हैं। रूप माधुरी का पान करते भक्त आज थक ही न रहे थे। कुछ की स्थिति और भी विचित्र थी।

उनसे इस हर्ष का वेग सहन नहीं हो पा रहा था और अपना होश गंवा बैठे। बाबा ने अपने दिव्य हस्त से अक्षत उत्पन्न करके उन भक्तों पर छिड़का, तब कहीं जाकर उन्हें होश आया। बाबा ने उन्हें झिड़कते हुए कहा, दुःख और सुख दोनों के वेग को सहन करना सीखो। मन में जो उद्वेग आते हैं उन्हें सहन करना सीखो। अन्यथा भविष्य में तुम्हें किसी प्रकार का भी दर्शन नहीं होगा।

एक दिन कमालपुर से आये एक भक्त ने श्री सत्य साई से बहुत विनय की और कहा कि वह चमत्कार देखना चाहता है; किसी महिमा के दर्शन करना चाहता है। बहुत समय तक बाबा चुप रहे, परन्तु उसकी अधिक हठ होने पर बाबा ने कहा—"जाओ ईश्वरम्मा को भी बुलाओ—दशावतारों का दर्शन कराता हूं।" माता ईश्वरम्मा भी आ गई और उन सब भक्तों को सामने बैठाकर बाबा ने कहा, यह देखो, अहा सबको बाबा के शरीर से मत्स्यावतार के दर्शन हुए, स्वतः ही सबके हाथ जुड़ गये। फिर कूर्मावतार के दर्शन किये उसके पश्चात् क्षीरसागर, मन्दार पर्वत, देव और दानवों द्वारा समुद्र मंथन का दृश्य भी सबने देखा। उन दृश्यों को देखकर सब ही आनन्द विभोर हो उठे। अब वराह अवतार के दर्शन हुए तो भक्तों में से कुछ भयभीत हो गये; तो कुछ ने भय से नेत्र मूंद लिये—ध्यान करने लगे। माता ईश्वरम्मा ने देखा उस वराह के तड़ित रेखा जैसे केश हैं, चमकदार दाँत बड़े भयावह हैं। मुख और नेत्र सब ही डरावने हैं! तभी माता भयभीत हो हर्ष, भय विह्वलता के कारण चिल्ला उठीं, "बस बस बन्द करो।" भगवान सत्य साई ने मन्द हास्य से आगे के दृश्य बन्द कर दिए। माता ने देखा सामने वही अपना पुत्र, कोख जाया, सत्य बैठा है, सदा की तरह हँसता हुआ। सभी दर्शक कुछ समय के पश्चात् आश्वस्त हुए। भगवान साई की लीला, भक्तों के प्रति उनका प्रेम, उनकी महिमा कौन समझ पाया है।

करणम वंश के अन्य व्यक्ति ने भी एक बार बाबा से दशावतारों के दर्शन के लिए बहुत अनुनय किया। बाबा ने कहा—तुम्हारा शरीर दुर्बल है, तुम उस वेग को सहन नहीं कर सकोगे। परन्तु अन्त में उसके हठ पर उसे चित्रावती तट ले गए और पानी में अपना प्रतिबिम्ब देखने को कहा, उसने पानी के

अन्दर पहले भगवान साई के केश देखे फिर उसने दशावतारों का दर्शन करना प्रारम्भ किया।

पुराणों के क्रम से उसने दर्शन लाभ उठाया। बल्कि अवतार के दर्शन के समय उसने देखा, स्वयं भगवान साई ही घोड़े पर सवार हैं। पूर्णावतारों के दर्शन कर वह किस आनन्द में स्थित हुआ होगा, वह स्वयं ही जान सकता था, या भगवान। दर्शन के पश्चात वह एक माह इस नश्वर शरीर में और रहा, परन्तु न जाने किस विचित्र भाव में स्थित और फिर एक दिन उसी भाव में आत्मविभोर होता हुआ वह सच्चिदानन्द में लीन हो गया।

किस जन की क्या मनोभूमि है, उसको कब का क्या प्रदान करना है, यह बाबा ही जानते हैं। एक बार बंगौलोर सेक्रेटिएट के एक कर्मचारी श्री कृष्णमूर्ति बाबा के पास आये और उन्होंने बड़े कातर स्वर में प्रार्थना की, "प्रभो, मुझे अपने दर्शन कराइये। मैं जानता हूँ आप केवल यही हैं जो दिखाई दे रहे हैं नहीं हैं; मुझे आप अपने रूप के दर्शन कराइये।" उनकी कातर प्रार्थना सुन बाबा का दायाँ दैविक कर तनिक हवा में उठा और उसमें पूर्व शरीर भगवान शिरडी साई का एक चित्र आया, श्री सत्य साई ने कहा जाओ, इसका ध्यान करो, मैं अभी आता हूँ। कृष्णामूर्ति ने वैसा ही किया। प्रातःकाल के आठ बजे से दोपहर के १२ बजे तक का समय बीता, तभी श्री सत्य साई कहीं से लौटे। उनके आगमन की आहट पाकर बस केवल "परमेश्वर" शब्द कहकर वह भगवान सत्य साई के चरण स्पर्श करने को बढ़ा, परन्तु साई उसके सामने से हट गये। उन्होंने उपस्थित लोगों से कहा, इसे दूर ही रखो, अन्यथा चरण स्पर्श करने के पश्चात् यह शरीर छोड़ देगा। उधर कृष्णामूर्ति हे पिता राम, हे परमेश्वर, मुझे चरणों में स्थान दो, मुझे अपने में लीन कर लो, आदि कहता नेत्र मूंदें उन्हें खोजने का प्रयास कर रहा था। श्री सत्य साई उसके शरीर की रक्षा के निमित्त उस घर से ही चले गये। परन्तु आँख बन्द किये की कृष्णमूर्ति भी वहाँ किसी स्वजन का सहारा ले पहुँच गया। भगवान के चरण स्पर्श को वह आतुर था। उसकी अनुनय-विनय सुन लोगों का हृदय पिघल उठा, परन्तु साई उससे दूर रहे। भोजन न करने से वह अत्यधिक कमजोर हो गया था। बाबा ने उसके लिए चरणोदक भिजवाया, चरणोदक पाकर उसे बडा

बल मिला। कृष्णामूर्ति ने उपस्थित लोगों से कहा, उसका नाम संकीर्तन करो, "साई नाम" ही लो। सबने भगवान साई की आरती गाई, नाम संकीर्तन किया और जब आरती का कपूर प्रज्ज्वलित थाल उसके पास ले गये तो पाया कि श्री कृष्णमूर्ति अपने संस्कारों के बल पर, अपनी तपस्या के लहारे, प्रभु की कृपा से भगवान सत्य साई के चरणों में सदा के लिए समर्पित हो चुका था। आज भी कृष्णमूर्ति का विशुद्ध प्रेम स्मरण कर भक्तगण नत मस्तक हो जाते हैं।

एक दिन संध्या को कुछ दर्शनार्थी आये। उनके मन में केवल एक कौतूहल ही था। देखें पेद्दवेंकप्पा राजू के पुत्र में क्या विशेषता है? बस और कुछ नहीं। अविश्वास की माया ही अधिक रही होगी। श्री कृष्णमाचारी नामक एक वकील महोदय भी उनमें से थे। वह कभी पुट्टपर्ती के ही निवासी थे और अपनी प्रैक्टिस के सम्बन्ध में वहाँ से चले गये, थे, अपने ग्राम में आने पर वह श्री सुबम्मा के घर पर ही ठहरे और उन्होंने पेद्दावेंकप्पा राजू के आने पर उससे पूछा, कहो जी, यह आपके लड़के में क्या-क्या चमत्कार हो रहे हैं? यह सब क्या तमाशा है? तब विनीत भाव से श्री राजू ने उत्तर दिया महाराज यह अधिक और शिक्षित और ज्ञानी पुरूषों के द्वारा ही उत्तर दिया जाने वाला प्रश्न है। मैं तो साधारण बुद्धि वाला पुरुष हूँ, भला कैसे बताऊँ कि लड़के में यह चमत्कार क्या हैं और क्यों होते रहते हैं? इस पर वह वकाल महोदय और भी झुंझला उठे। बोले यह सब प्रपंच है, दम्भाचार है, तुम भी अपने लड़के के साथ उसके पाखण्ड में सम्मिलित हो गये हो और प्रचार कर रहे हो।

इन शब्दों के सुनकर सचमुच राजू को महान आन्तरिक पीड़ा हुई, उस समय श्री सत्य साई अपने एक छोटे भाई से भजनगृह में उपस्थित थे। उनके पास जाकर क्षुब्ध भाव से पिता ने कहा—तुम्हारे कारण मुझे क्या मिला—केवल अपमान, लोगों के कड़वे शब्द। शान्त स्वर में श्री सत्य ने कहा—उनको और आप को प्रमाण चाहिए न? ठीक है—उनको बुला लाइये। पिता ने श्री सत्य साई के शांत स्वर को सुना और फिर वकील महोदय को बुलाने चल दिये। वकील साहब की बात ने उनके हृदय पर बड़ा आघात किया था और वह चाहते थे कि किसी प्रकार की निर्णयात्मक स्थिति हो जाये ताकि कम से कम उनके व्यक्तित्व को तो लाँछन न सहना पड़े।

श्री पेद्दवेंकप्पा राजू के साथ वकाल कृष्णमाचारी आये। साथ में अनेक लोग और भी आये। सबसे पहले भगवान सत्य साई ने श्रीमती सुबम्मा को बुलाकर कहा, आइये-आइये। आँख मूंद कर उस कक्ष तक चलिए आपको शिरडी की समाधि दिखाता हूँ। आज आपको पूर्व शरीर का समाधी स्थल दिखाता हूँ। सुबम्मा बाबा के साथ आँख मूंद कर अन्दर गयीं—अन्दर नेत्र खोलने पर देखा—भगवान शिरडी साई की समाधि सामने है—उनके पास अगर, धूप, चन्दन की बत्तियाँ जल रही हैं, सुगन्ध फैल रही है। उन सामग्रियों का धुआँ हो रहा है। दीप प्रज्ज्वलित हैं, शिरडी साई की विशाल मूर्ति स्थापित है घण्टा ध्वनि हो रही है, पुष्पार्चना का क्रम अबाध गति से चालू है। माता सुबम्मा ने शिरडी समाधि के दर्शन किये और निहाल हो गयीं। कमरे में ही सब दर्शन हो रहे हैं—जागते, आँखे खोले। धन्य भाग मानकर आनंदाश्रु बहाते-बहाते बाहर आयीं। तब दूसरे जन को बाबा उसी प्रकार ले गये और फिर श्री कृष्णमाचारी को भी बाबा कक्ष में ले गये। जिसको भी जाने का सौभाग्य मिला, उसने अपने भाग्य को धन माना। उसके समस्त संशय समाप्त हो गये। अश्रुपूरित नेत्रों से वह श्री सत्य साई को नमस्कार करते-करते कक्ष से बाहर आये। अन्त में अपने पिता को श्री सत्य साई ने कहा—आप भी नेत्र मूंद कर ही जाइये और पिता को भी आनन्दपूर्ण दर्शन प्राप्त हुआ। आज पिता के हर्ष का पारावार नहीं था। उनके मन पर पड़ा हुआ कटु वाक्यों का मल नष्ट हो चुका था। अब उनको कोई नहीं कह सकता था कि उनके पुत्र ने अपने अवतारी होने के प्रमाण नहीं दिये। सब नत मस्तक थे—सब ही के हृदय में विश्वास प्रकट हो गया था।

उस दिन के पश्चात् श्री राजू महाशय ने साफ कह दिया, एक युग तक उन्होंने मुझे पिता कहकर न जाने कौन से पूर्व सत्कर्मों का लेखा-जोखा निपटा कर सौभाग्य दिया है, बस अब समाप्त करो। वह भगवान है। उसके विषय में दुराव मत रखो। उनकी अर्चना करो। बस अब और किसी भी बात की आवश्यकता नहीं है।

पुट्टपर्ती ग्राम पवित्र स्थली बनता जा रहा था—उनकी प्रसिद्धि धीरे-धीरे होती जा रही थी। तभी एक दिन दिगम्बर स्वामी, जिनको यति भी कहकर सम्बोधित किया जाता था, पुट्टपर्ती आये। इन यति महाशय के दोनों पांव मारे हुए थे, अर्थात् वह अपने पाँवों से चल-फिर नहीं सकते थे। उनको नौकर ही डोली में चढ़ाकर इधर-उधर ले जाते थे। फिर कहीं उनको बैठा दिया जाता था और उस नग्न स्वामी के दर्शन कर लोग अपने को धन्य माना करते थे। उन्होंने मौन भी धारण किया हुआ था, परन्तु दिन भर उनका इशारे कर करके ही बातें करने में बीतता था। पुट्टपर्ती आने पर लोगों को आशा थी कि आज न जाने क्या होगा? एक ओर महान अनुभवी यति—मौनानन्द जी आये हैं और दूसरी ओर अनेक चमत्कार कर पाने वाला १७ वर्षीय बाल साई पुट्टपर्ती में है, आज न जाने क्या चमत्कार होगें, कुछ ऐसी कल्पना करके ही दर्शकों का तांता लग गया। कुछ तो मौन दिगम्बर को देखने आये ही थे, कुछ इस प्रकार उत्सुकता को लेकर भी जा पहुँचे। अच्छी-खासी भीड़ लग गई।

करणम् सुबम्मा के बरामदे में उन दिगम्बर स्वामी को बैठा दिया गया, तभी उधर से श्री सत्य साई पधारे। उनके हाथ में एक तौलिया भी था, उस तौलिये को उस दिगम्बर महाशय को देते हुए श्री सत्य साई बाबा ने उनसे कहा—

आप दिगम्बर होकर, मौन धारण करके अपने को परम वैरागी सिद्ध करने का भाव दिखाते हैं। यदि आप वैरागी हैं तो फिर आपको नगर-नगर, ग्राम-ग्राम घूमने की आवश्यकता क्या है? क्यों आप इन नौकरों के कन्धों पर भार स्वरूप ढोये जाते हैं? यदि आपको सचमुच वैराग्य प्राप्त हुआ है तो किसी कन्दरा में जाकर बैठ जाइये और यह सेवा जो अपने शिष्यों से ले रहे हैं—यह मौन रखने के पश्चात् भी जो आप इशारों से बातें कर रहे हैं, बन्द कर दीजिए। यदि समाज में रहना है तो समाज के शिष्टाचार के अनुसार वस्त्र धारण करके ठीक से रहिये। समाज में रहते हुए भी आप समाज के सामने इतने अशिष्ट भाव से भ्रमण करते फिरते हैं; यह ठीक नहीं है। तभी बाबा ने उन नत मस्तक स्वामी को, यति को देखते हुए कहा, अरे, आप सोच रहे हैं कि यदि

कन्दरा में जाकर बैठ गया तो मुझे भोजन प्राप्त कहाँ से होगा। नहीं-नहीं ऐसा नहीं। आप कहीं भी रहिए, दृढ़ विश्वास रखिए, मैं आपको सब स्थानों पर भोजन दूंगा। आपके योगक्षेम की जिम्मेदारी मुझ पर सदा ही है।

कीर्ति, प्रतिष्ठा, सेवा, महानता आदि के गुणानुवाद शिष्यों के द्वारा सुन-सुन कर आप अपना समय क्यों व्यर्थ गंवा रहे हैं। क्यों समाज में भी प्रपंच की रचना कर रहे हैं? ऐसा कहकर श्री सत्य साई आगे बढ़ गये। उन यति महाशय की तो दशा ही खराब हे गयी। उनको आज किसी ऐसे सत्य के दर्शन हुए थे जिसको अन्तर में दबाकर उन्होंने बन्द कर दिया था। जिसकी आवाज को वह सुनना ही नहीं चाहते थे। आज आंखों से प्रपंच रूपी परदा हट गया था। आज उनको १७ वर्षीय एक बाल साई ने प्रकाश दिखाया था। इस प्रकार से भगवान सत्य साई से एक तौलिये का उपहार लेकर यह यति धन्य हुआ, जो उपदेश भगवान ने उसे दिया था, उसे उसने कितना हृदयंगम किया था।

पहले दिन से आगे आने वाला दूसरा दिन पुट्टपर्ती में अधिक से अधिक भक्तों को लाने वाला होता था। अग्नि स्फुल्लिंग की तरह भगवान सत्य साई का नाम एक से दूसरे गाँव, एक से दूसरे जन में फैलता जा रहा था। श्रीमती सुबम्मा का स्थान भी कम पड़ने लगा। आने वाले दर्शकों की बैल गाड़ियो को खड़े करने की जगह भी प्राप्त नहीं होती थी। आने वालों की सेवा में श्रीमती सुबम्मा दिन-रात लगी रहती थीं। कभी चावल कूट कर साफ कर रही हैं, तो कभी उनको बना रही है, तो कभी उनको भोजन के लिए वितरित कर रही हैं। एक बार ही, नहीं बहुत बार हुआ है और आज भी होता रहता है। भोजन १०० व्यक्तियों के लिए तैयार किया गया था और जब भोजन वितरण होने वाला था, या हो चुका था, तभी अन्य ग्रामों से उससे भी अधिक भक्तों की संख्या और आ गई। अब माता सुबम्मा और ईश्वरम्मा को संकोच हुआ—अरे, भक्तों को भोजन भी न दे पाई, हाय। बस जिनका कोई सहारा न हो उनका एक वही सहाका होता है, दौड़कर श्री सत्य के समक्ष खड़ा होना ही पर्याप्त है।।

बाबा श्रीमती सुबम्मा और ईश्वरम्मा को आया जान मन्द-मन्द मुस्कराते, कहते, अच्छा भक्त और आये हैं तो भय क्या, आने दो सबको आने दो। जब मैं हूँ तो भय किस बात का ? और ऐसा कहते-कहते भोजन गृह में गए, माता ईश्वरम्मा से वहीं कहीं रखे दो नारियल मंगाए। फिर उन दोनों को आपस में टकरा कर उनका जल हाथ में लिया और बचे हुए या बने हुए भोजन पर जल को छिड़क दिया, फिर माता से कहा, आओ बांट दो, सबको यथायोग्य जितना चाहिये उतना दे दो। सुबम्मा ने बाबा के कहने के पश्चात् आये हुए भक्तों को भोजन वितरण प्रारम्भ कर दिया। भावावेश वाली माता सुबम्मा अश्रुपूरित नेत्रों से देखती रही। पात्र से सामान दे रही थी फिर भी पात्र अक्षय बनकर खाने के सामान को बढ़ाता ही जा रहा था, जब तक आये हुए एक-एक भक्त को भोजन न मिल गया, पूरी तरह से आवश्यकतानुसार अन्न प्राप्त न हो गया तब तक क्या साहस है उस पात्र का जो खाली हो जाये।

जगत्पिता देवाधिदेव अखिलेश्वर भगवान शिव ही जब मानव देह में हों और उस पर भी आद्यशक्ति, जगदम्बा, माता-अन्नपूर्णा भी उनके साथ ही उस शरीर में लीला हेतु आई हों और फिर भला पात्र अक्षय क्यों न हो जाए ? फिर सौ दो सौ भक्तों के भोजन का प्रश्न ही क्या ? जो भी द्रुपदसुता के अन्न कणों को चख कर अन्य-अन्य जनों में तृप्ति का भाव भर सकता है, वही जब अपने अद्भुत करों से पदार्थों पर जल छिड़क कर उनको अक्षय कर रहा हो तो कौन रोके। जिसके स्मरण मात्र से तीनों ताप नष्ट हो जाते हैं उसके स्वयं उपस्थित होने पर क्षुधा भला कैसे सतायेगी। माता सुबम्मा और ईश्वरम्मा का जीवन इसी प्रकार सेवा में व्यतीत हो रहा था। दिन ओर रात किस प्रकार बीत जाते हैं उन्हें पता ही नहीं चलता था।

पुत्र को पिता ठीक रखना चाहता है। चाहो वह प्रेम की वाणी को मान कर ठीक हो अथवा डाँटने से। एक बार ऊडुमलपेटे का एक दुकानदार ऋण तथा अपयश से डर कर अपनी पत्नी को भी वहीं छोड़ कर रंगून भाग जाने के लिए मद्रास बन्दरगाह पर पहुँचा और सुरक्षित रखा हुआ अपना बटुआ जेब से निकालने लगा तो पाया कि जेब में बटुआ नहीं है। बहुत दुःखी हुआ,

क्योंकि बटुए में ही सब कुछ था, उसके बिना रंगून भाग जाना नितांत असम्भव था। किसी प्रकार घर आया तो अपनी मेज पर एक पत्र देख कर हैरान हो गया। पत्र में लिखा था—

"कायर पुरुष परिस्थितियों से डर कर कहाँ भाग रहे हो? क्या दैव और तुम्हारे कर्म तुम्हें वहाँ छोड़ देगें? क्या तुम हजार पाँच सौ मील जाकर उसको धोखा दे पाओगे? तुम अपनी साध्वी पत्नी को दुःखी करके उसको छोड़ कर जा रहे हो, जब मैं हूँ तो घबराते क्यों हो, जाओ अपनी पत्नी को सान्त्वना दो। दोनों मेरे पास पुट्टपर्ती आओ।"

उस दुकानदार ने पत्र पढ़ा और पश्चात्ताप के कारण रो पड़ा। बाबा को मेरे मकान का पता भी मालूम हो गया। उनको मेरा भागना भी पता चल गया और मेरा बटुआ भी। पश्चात्ताप के अश्रु बहाकर वह बाबा के शरण में आया।

अब भक्तों की भीड़ दिन प्रतिदिन अधिक होती जा रही थी। सुवम्मा को अधिक कष्ट देना बाबा नहीं चाहते थे। गोपाल स्वामी के मन्दिर तथा सत्यभामा के मन्दिर के मध्य का जो स्थान था, उस पर ही एक सत्संग भवन तथा आगे पीछे दो बरामदे और चारों कोनों पर निवास कक्ष बनवाने का कार्यक्रम श्री तिरुमल राव तथा अन्य भक्तों ने तैयार किया। स्थान निश्चित हो गया था, अब किसी दिन शुभ मुहूर्त्त में श्रीगणेश होना भर शेष था। अपने-अपने भवन निर्माण करते समय अनेकानेक जन कुदाली का पूजन, हथौड़े का पूजन आदि अथवा चौखट की स्थापना करके ही निर्माण-कार्य प्रारम्भ किया करते हैं, परन्तु निलयम् का निर्माण अपने अलग ही ढ़ंग से हुआ। थोड़ी दूर पर एक विशाल काली चट्टान पड़ी थी। उसमें बराबर के पत्थर काट कर, तोड़ कर बनाने के कार्य से ही इसका प्रारम्भ हुआ। सबसे पहला प्रश्न भक्तों के सामने यह था, इन भंयकर भार वाली चट्टानों को किधर से तोड़ें—बज्र के समान कठोर चट्टान। भगवान सत्य साई के समक्ष यह समस्या रखी गई। बाबा मंद हास्य कर उठे।

अतः भक्तों ने विस्फारित नेत्रों से देखा। चट्टान के चार टुकड़े हो गए हैं जैसे उनकी आज्ञा भर की देर थी कि स्वयं देवेन्द्र ने उस पर अपने बज्र का

प्रयोग किया हो—निर्माण समाप्त होने के पश्चात् आज भी दो टुकड़े उस भंयकर भार वाली चट्टान के, चित्रावती के मार्ग पर पड़े हैं। उस चट्टान को तोड़ कर तथा उसके सम भाग वाले पत्थर बना कर प्रशान्ति निलयम् के निर्माण का कार्य प्रारम्भ हुआ। प्रशान्ति निलयम् का निर्माण स्वयं में ही एक चमत्कार है। वह इलाका जहाँ प्रशांति-निलयम् का निर्माण हुआ है—एक बोरी सीमेन्ट ले जाने के लिए भी मनुष्य को कठिन जान पड़ता होगा। निर्माण कार्य प्रारम्भ हो गया था—बाबा के साथ इन्जीनियर महोदय तथा अन्य निर्माण के कार्य करने वालों की वार्ता होती रहती थी। कभी-कभी कोई प्रश्न सामने आने पर अन्त में सब ही यह पाते थे कि बाबा ने जो परामर्श दिया है, वही निर्माण कौशल की दृष्टि से सर्वोपरि है। यह इन्जीनियर महाशय अनंतपुर के थे और निर्माण की सहायता के लिए प्रायः आते रहते थे। प्रार्थना भवन की ऊंचाई और लम्बाई को दृष्टि में रख कर उनके लिए खुछ गार्डरों (लोहे के बड़े-बड़े शहतीरों) की आवश्यकता थी। तभी पता चला कि त्रिचनापल्ली के समीप एक पुल बना था और उसका शेष सामान बेकार ही वहाँ पड़ा है-सरकार ने लिखत-पढ़त करने पर तुरन्त ही उस समान की बिक्री प्रशान्ति निलयम् को कर दी। अब यह प्रश्न तो हल हो गया कि परमिट और सप्लाई के कठिन समय के कारण सामान मिले कहाँ से, लेकिन अब उससे भी अधिक कठिन प्रश्न सामने आया कि इन लोहे के शहतीरों को लाया कैसे जाये। इन्जीनियर महोदय ने साफ-साफ कह दिया, यदि यह शहतीर किसी तरह पेनुकोन्डा भी आ गए तो भी मार्ग में पड़ने वाले छोटे-छोटे गाँवों के मध्य से आने वाले मार्ग से कैसे आ पायेंगे। रास्ते में एक पुल पड़ता है उस पर से यह भार लाया ही नहीं जा सकता। यदि इधर से लाया गया तो वह पुल भरभराकर धरातल में धँस जायेगा; और कोई मार्ग नहीं, आदि-आदि। अनेक अड़चने थीं, उसको लाने में। इन्जीनियोरों ने तथा अन्य जनों ने राय दी, इन कड़ियों को लाना हो ही नहीं सकता। यह विचार छोड़ देना चाहिए।

इन्जीनियर महाशय अपने बंगले के बरामदे में सो रहे थे। रात्रि का मध्य प्रहर था। सभी एक भंयकर विस्फोट की ध्वनि से चौंक कर उठ बैठे। बंगले

के बाहर देखा एक विशालकाय क्रेन खड़ी सौं-सौं कर रही है। बाहर जाकर ज्ञात करने पर पता चला यह क्रेन तुंगभद्रा-अणेकट क्षेत्र से मद्रास जाने वाली है उसका चालक एंग्लोइण्डियन है और यह विस्फोट उसके इंजन के बुरी तरह खराब होने का सूचक था। अब एंग्लोइण्डियन महाशय माथे पर हाथ रखे उदास बैठे चिंता कर रहे थे। कब पुर्जा आयेगा बम्बई से, कब वह फिट होगा, और कब यह चल पायेगा।

अपने इन्जीनियर महोदय ने भी उस क्रेन की दुर्दशा को देखा और न जाने क्या विचार करके मस्तिष्क में आया कि वे उठकर पुट्टपर्ती पहुँचे और बाबा से क्रेन के विषय में बताया। बाबा ने मन्द-मन्द मुस्कराते हुए कहा फिर क्या करें? इन्जिनियर बोले— यदि यह क्रेन ठीक हो जाये और उससे कहा जाए कि वह हमारे लोहे के भार को यहाँ तक पहुँचा जाए और वह मान जाए तो हमारे लोहे के स्लीपर यहाँ आ सकते हैं। इन्जीनियर महोदय की तीव्र बुद्धि देख श्री सत्य साई ने विस्मित हास्य मुद्रा में ही अपने दैविक कर को ऊपर उठाया और उसमें भस्मी प्रकट हुई। उस भस्मी को इन्जीनियर को देते हुए बाबा ने कहा—जाओ यह भस्मी अपनी उस क्रेन पर छिड़क दो— और अपने लोहे के भार को उठवाकर यहाँ ले आओ।

इन्जीनियर महाशय ने अपने मन के भाव बताये थे। एक ओर तो मेरा विज्ञान था जो मुझे बाबा की बात पर हँसने को मजबूर कर रहा था, दूसरी ओर बाबा की दी हुई भस्मी थी, जिसको छिड़क कर देखने को मन का कौतुहल, जिज्ञासा, दबाव डाल रही थी। और अन्त में विश्वास और अविश्वास दोनों के बीच झूलते हुए, मैंने उस पुड़िया से भस्मी निकाल ली, और ड्राइवर से तय कर लिया, यदि तेरा इंजन ठीक हो जाये और तेरी क्रेन काम करने लगे— तो तू हमारा भार प्रशान्ति निलयम् पहुँचा देना। उन महाशय ने सहर्ष इसको स्वीकार कर लाया था।

पुड़िया की भस्मी को निकाल कर—जय साईराम, जय साईराम कह कर—मैंने इंजन पर छिड़क दिया और ड्राइवर से इंजन स्टार्ट करने को कहा। उसने स्टार्ट करने का प्रयास किया और विज्ञान के क्षेत्र से बाहर की बात हुई,

क्रेन काम करने लगी। वह अपने इंजन द्वारा चलायी जा सकती थी। क्रेन स्टार्ट हो गयी थी। इंजन का चक्का घूम रहा था। दस कदम भी आगे बढ़ने से जिसने रात्रि को इन्कार कर दिया था, जिसको चलाने के लिए चालक सर पटक कर मर रहा था, वही उसके आज्ञाकारी वाहन की तरह चल रहा था। एंग्लोइण्डियन ड्राईवर किंकर्त्तव्य विमूढ़ सा हो इन भारतीयों की अवस्था और इनके करिश्मों को देख रहा था और क्रेन को चला रहा था। उसे लग रहा था अब रुका—अब रुका। परन्तु क्रेन चलती रही और पेनुकोण्डा स्टेशन आ गया। बड़ी-बड़ी लोहे की कड़ियाँ अपने ऊपर लाद कर चल पड़ा। डिस्ट्रक्ट बोर्ड की खराब सड़क बड़े-बड़े गड्ढे, ऊंची-नीची तल, छोटे-छोटे पुल, गाँव के घर से बचता हुआ क्रेन बुक्कपट्टनम पहुँचा।

कर्नाटनागपल्ली की ऊंचाई चढ़ना तो असम्भव ही दीख रहा था, लेकिन आश्चर्य था क्रेन धीरे-धीरे उस ऊंचाई को भी पार कर गयी। जानकमपल्ली कीचड़ से भी पार हो गया, नाले में उतरा और उसके ऊपर भी पहुँच गया। लेकिन सामने परम पावन पवित्र चित्रा का रेत आँचल जो पसरा हुआ था—उस आँचल को कैसे पार करे? चित्रा का रेत आया और क्रेन आराम करने के लिए रुक ही तो गयी। इन्जीनियरों की बुद्धि को फिर जंग लगने लगा। तुरन्त ही याद आये अपने बाबा! दौड़कर दोनों भगवान सत्य साई के पास पहुँचे। बाबा ने कहा—जब मैं हूँ तो घबराने की क्या आवश्यकता? और उन दोनों के साथ क्रेन तक आये फिर ड्राइवर के पास ही सीट पर बैठ गये। बोले चलाओ अपनी इस क्रेन को। ड्राइवर ने क्रेन चलायी। क्रेन चली—दौड़ी और चित्रावती की रेत को पार करके प्रशान्ति निलयम् की सीमा में पहुँच गयी।

"जहाँ विज्ञान की सीमायें समाप्त होती हैं, वहाँ आध्यात्म की सीमा प्रारम्भ होती है।"

यह सब कुछ हुआ तो, परन्तु इन भारी शहतीरों को प्राचीरों के ऊपर चढ़ाया तो जा ही नहीं सकता, फिर विचार हुआ और चार पाँच लारी भरकर श्रमिक लाये गये, बाबा से प्रार्थना की गई तो उन्होंने कहा—हाँ ठीक है—भजन करते जाओ—इनमें रस्से बाँध कर इन्हें उठाते जाओ—यह उठते

जायेंगे—जहाँ तक तुम उठाना चाहोगे। अजीब नजारा था, विचित्र दृश्य था—भारी-भारी लोहे के शहतीरों से रस्से बन्धे थे, उनको उठाने के लिए प्राचीरों पर श्रमिक कतार बाँध कर खड़े थे और उन सबके द्वारा ध्वनि हो रही थी—नाम संकीर्तन हो रहा था—

जय साई राम जय जय साई राम,
जय साई राम जय जय साई राम।।

जिसके नाम पर पत्थर तैर गये थे, आज फिर उसी के नाम के प्रताप को लोगों ने देखा और अनुभव किया—भार उठाता जा रहा था जैसै कोई नीचे से भी सहारा दे रहा हो। अन्त में सब ही लोहे के शहतीर अपने स्थान पर पहुँच गये।

प्रशान्ति निलयम् का प्रार्थना भवन ही मुख्य मन्दिर है। उसमें एक सहस्र से भी अधिक लोग बैठ सकते हैं। विशाल सभा मण्डप के दोनों ओर मंच बना हुआ है। जिसमें से एक मंच पर भगवान शिरडी साई की कांस्य प्रतिमा स्थापित है। उनके पृष्ठ भाग में ओं३म् का विशाल आकार बना हुआ है जिससे विद्युत प्रकाश फैल कर पूर्ण मंच को ही प्रकाशित करता रहता है। भगवान शिरडी साई के दायें भाग में एक मानवाकार मूर्ति आनन्दकन्द भगवान कृष्ण की स्थापित है और बायीं ओर भगवान श्री सत्य साई बाबा के विराजने के लिए कुर्सी बिछी हुई है। अभी कुछ दिन पूर्व ही दक्षिण के एक भक्त शिल्पी ने भगवान सत्य साई की प्रतिमा का निर्माण किया था और अब उसको भगवान शिरडी साई के पृष्ठ भाग में स्थापित कर दिया गया है। जब अर्चना हो रही होती है, जब भक्त भाव विभोर होकर अपने प्रभु को पुकार रहे होते हैं जब दक्षिण का मनोमुग्धकारी गायन धीमे स्वर में लहरियों का आरोह और अवरोह के मध्य रह कर प्रसारित होता है, तब उन क्षणों में भगवान भी अपने पार्श्व में बने छोटे से कक्ष से निकलकर उस बिछी हुई कुर्सी पर आकर आसीन हो जाते हैं। भजन पूजन-गायन अर्चन— सब अपने प्रकार से चलता रहता है—हाँ भक्तों के नेत्र न जाने क्यों मुद से जाते हैं। जब वह सामने है तो नेत्र

क्यों मुँदते हैं। कदाचित इस ही लिए की सब ही उनको अपनी पुतलियों की कोठरी में बन्द कर लेना चाहते होंगे।

प्रशान्ति निलयम् वह पवित्र स्थली है जहां ध्यान सिखाया नहीं जाता, स्वतः हो जाता है—जहाँ यम-नियम केवल कथनी में नहीं, करनी में है। जहाँ पर पहुँचने वाला स्वयं ही अपने मुख से उसका विशद वर्णन करता फिरता है—जिसकी इच्छा हो वह जाये। बड़े-बड़े टीन के शेडों का निर्माण हो चुका है। उनके बीच जहाँ भी स्थान हो अपना बिस्तर रख लीजिये, अपना सामान रखकर निश्चिंत हो जाइये। घूमिये-फिरिये, वहाँ पहुँचने के बाद आपकी जिम्मेदारी कुछ नहीं रहती। बाबा सब जानते हैं, वह सब देखते हैं। यही सबका भाव होता है, ऐसा ही सब प्रतीत करते हैं, ऐसा ही सबने पाया है।

प्रशान्ति निलयम् के पार्श्व में ही तपोभूमि का निर्माण भी पूरा हो चुका है ।तपोभूमि अर्थात् पर्वत को केवल थोड़ा-सा मानवगम्य बना दिया गया है, मार्ग को थोड़ा सुव्यवस्थित कर दिया गाय है जिससे लोग पर्वत पर ऊपर जा सकें और चारों ओर का दृश्य देख सकें। उस तपोभूमि पर तीन प्रकार का स्थान.... एक तमोगुण का, एक सतगुण का और एक रजोगुण का। बाबा कहते हैं तुम तपोभूमि पर जाओ और जो भी तुम्हारी मनःस्थिति होगी, उसके अनुसार ही तुम्हें स्थान पसन्द आएगा अपनी मनो भूमि को पहचान कर आगे बढ़ो इसके लिए यह तपोभूमि निर्मित हुई है। उस तपोभूमि में ही एक वृक्ष लगा हुआ है। वटवृक्ष। अब तो उसकी छाया इतनी हो चुकी है जिसकी छाया में १०० व्यक्ति तक बैठ सकते हैं। उनके चारों ओर पृथ्वी को समतल कर दिया गया है। साधक वहाँ जाकर ध्यान करते हैं। इस वटवृक्ष की भी अपनी कथा है।

एक दिन बाबा अपने भक्तों के साथ चित्रावती के तट पर बैठे थे। भगवान बुद्ध विषयक वार्ता चल रही थी। तभी किसी भक्त ने पूछा बाबा भगवान् बुद्ध ने वटवृक्ष को ही साधना के लिए क्यों चुना था? श्री सत्य साई ने उत्तर दिया, क्योंकि उस वृक्ष के नीचे तमोशक्ति का प्रेरक एक यंत्र स्थापित किया गया था। उस यंत्र शक्ति के कारण ही बुद्ध उसकी ओर आकर्षित हुए

थे और उसके कारण ही उन्होंने उस स्थान को पसन्द किया। तभी बाबा ने रेत पर अपने हाथों से कुछ अक्षर से लिखे, फिर रेत में हाथ ड़ालकर एक ताम्रपत्र निकाल लिया। उस ताम्रपत्र पर भी यंत्र स्थापित था। बाबा ने कहा चलो इस ताम्रपत्र को स्थापित करें। आने वाले समय में इसके आकर्षण से न जाने कितने झीव इसके पास आयेंगे और ज्ञान लाभ करेंगे।

भक्तों का यह समुदाय बाबा के साथ उस स्थान पर गया, जहाँ आजकल वटवृक्ष स्थापित हैं। बाबा ने उस स्थान पर उस यंत्र को स्थापित किया और फिर वटवृक्ष को भी रोपित किया। आज वह वटवृक्ष अपनी मर-मर पत्र-ध्वनि से भक्तों को न जाने किस लोक, किस ध्यान पुंज की ओर, इंगित करता सा खड़ा है। जाने वाले प्रायः ४ बजे और उससे भी पहले मध्यरात्रि में भी संध्या, ध्यान, धारणा और समाधि के लिए उसकी छाया में जाकर बैठते हैं। वह क्या पाते हैं? पाने वाले जाने या भगवान सत्य साई।

प्रशान्ति निलयम् के बड़े हाल में भगवान शिरडी साई के अनेकानेक रूपों में तैलचित्र स्थापित किये हुए हैं। उनके साथ-साथ भगवान सत्य साई के भी बहुत से चित्र लगे हुए हैं। इनमें ईसा मसीहा का, एक भगवान श्री रामकृष्ण परमहंस और उनके परम शिष्य स्वामी विवेकानन्द का नाम, खुमारी में मस्त रहने वाले गुरु महाराज नानकदेव का, मीरा का और भी एक दो और हैं। देखने वालों को लगता है, क्या यही स्थान है जहां सर्व धर्म समन्वय होता है। क्या यही वह स्थान है जहां हम किसी को भी चाहें अर्चना करें, कर सकते हैं, जिसका का भी ध्यान करना चाहें कर सकते हैं। बाबा ने कहा—

तुम किसी का भी ध्यान करो। किसी भी नाम का स्मरण करो। तुम्हारा कोई भी इष्ट हो, तुमने किसी को भी गुरू के रूप में स्वीकार किया हो। सब ठीक है। सब मेरे ही रूप हैं। सबकी अर्चना मुझे ही पहुँचती है, परन्तु तुम करो तो सही।

प्रशान्ति निलयम् अर्थात् भगवान सत्य साई का मन्दिर बनकर तैयार हो गया और बाबा ने अपने लिए आगे के बरामदे में बना हुआ ६ फीट चौड़ा और ८ फीट लम्बा कमरा पसन्द किया। नीचे जो कमरा है, उसमें केवल एक

कुर्सी पड़ी है और जिन व्यक्तियों को बाबा व्यक्तिगत साक्षात्कार वार्ता का सौभाग्य देते हैं, उन्हें उस कमरे में ले जाते हैं। तथा आत्मतोष. शान्ति, सौख्य, पुत्र, रत्न, उपासना, ज्ञान सबह कुछ जो जिसका अधिकारी और आकांक्षी होता है, देते हैं—बाबा कहते है—

पुत्र पिता के पास कुछ मांगने आता है, तब कुछ भेंट लेकर, स्तुति करके भूमिका बनाकर थोड़े ही मांगता है। वह तो सीधे ही भाव से पिता से अपनी इच्छित वस्तु मांग लेता है और पिता उसकी हित कामना के अनुसार उसे देता है। तुम मेरे पास निःसकोच भाव से आओ, अपने सब दुःख, क्लेश, कष्ट मुझे दे जाओ और मुझसे शक्ति ले जाओ। पात्रता उत्पन्न करो, फिर पात्र भरने में देर नहीं।

बाबा के पास भक्त रिक्त हस्त जाते हैं, क्योंकि बाबा कहते हैं कि तुम्हारे हाथ ही भरे होगें तो मेरी दी हुई वस्तु को कैसै ग्रहण करोगो। बाबा के पास से भक्तों को क्या मिलता है, उसको केवल सौभाग्यशाली भक्त ही जान सकते हैं, जिन्हें उनके दर्शन करने का सौभाग्य मिलता है।

पुट्टपर्ती में विश्वासी और अविश्वासी सभी लोग रहते हैं। कुछ लोगों ने बाबा के सत्यासत्य की परीक्षा लेने की सोची। उन्होंने विष युक्त भोजन बनाया और बाबा को भोजन पर आमंत्रित किया। भोजन में जाते समय दो एक जन और भी बाबा के साथ थे। भोजन के समय बाबा ने स्वयं मांग कर वह सब पदार्थ अपने सामने रख लिये जिनमें विष था।अपने साथ आये जनों को कुछ भी नहीं दिया। फिर सब भोजन खाकर सुबम्मा के स्थान पर आये और वमन करके विष युक्त भोजन निकाल दिया। अचानक ही कुछ कौवों ने उस झूठन को खाया और समाप्त हो गये। थोड़ी देर बाद वह लोग, जिन्होंने विष दिया था, अपने किये का परिणाम देखने आये। बाबा ने स्नेह से उन्हें बुलाया....अपने पास बैठाया....और कहा, न-न, घबराओ बिल्कुल मतं....तुम्हारा विष देने का केवल यही तो प्रयोजन था कि तुम मेरी शक्ति परीक्षण करना चाहते थे, मेरी वास्तविकता देखना चाहते थे। तुम्हारा अधिकार है....मुझे सब ओर से जानो समझो....किस प्रकार तुम उचित समझते हो यह सोचना तुम्हारा अपना काम

है। ऐसी उदारता, विशालता किसमें होगी? परम पिता के अतिरिक्त कौन अपने बच्चों को ऐसे कहेगा?

भगवान सत्य साई साक्षात करुणा मूर्ति हैं...दीन बन्धु, दीन-वत्सल सब कुछ हैं। सब उनकी सन्तान हैं...कोई देश हो, कोई भू-खण्ड हो, कोई जाति हो सब ही तो उनमें सम्बनधित हैं। एक बार बाबा भक्तों के आग्रह पर बंगलौर पधारे हुए थे।केन्टोनमैंट मार्ग पर स्थित एक कोठी में बाबा को ठहराया गया था...उस कोठी के सामने ही जूते और चप्पलों की मरम्मत करने वाला एक मोची बैठा हुआ था। आते जाते भक्त आपस में बात करते जाते...बाबा ने मुझे विभूति दी, बाबा ने मुझे आशीर्वाद दिया आदि-२। उस मोची के मन में भी इच्छा उत्पन्न हुई—मैं जाकर दर्शन तो करूँ। उठ कर मुख्य द्वार पार कर उस देहरी के पास ही नम्रतापूर्वक डरते उसने नमस्कार किया। मनो मुग्धकारी रूप में बाबा के दर्शन कर कृतार्थ हुआ। उसने तभी देखा, बाबा स्वयं ही उठकर उसकी तरफ चले आ रहे हैं। मोची बड़ा सकुचाया परन्तु तभी बाबा ने आगे आकर उसके हाथ से वह पुष्प ले लिया जो वह सामने वाली कोठी से तोड़कर लाया था।

क्यों भाई तुमको क्या चाहिए, तमिल में बाबा ने उससे पूछा। मोची को कुछ सूझा नहीं। उसने सोचा भी नहीं था कि बाबा उसके पास आकर उससे प्रश्न करेंगे? फिर भी उत्तर देने का साहस बाबा ने ही उसे प्रदान किया होगा। उसने "आपको मेरी झोपड़ी में आना पड़ेगा" कह डाला? बाबा उसके कंधे पर हाथ रख प्रेम से उनकी पीठ थपथपा कर "अवश्य आऊँगा" कह अपने स्थान पर लौट, कुर्सी पर बैठ गये।

मोची की आँखें सजल हो उठीं। अपने साहस पर स्वयं आश्चर्यचकित हुआ। किन्तु मेरे बाबा कैसे पधारेंगे, मुझ गरीब की झोपड़ी बाबा को कौन दिखायेगा? वह सब कैसे होगा? उनकी पूजा कहाँ, कब और किस समय? कहाँ उनकी प्रतीक्षा करूँ? इन विचारों से मगन मोची वहीं खड़ा रह गया। अचानक उसके सामने बिजली-सी चमक कर अंधेरा छा गया। बाबा बाहर आये और कार में बैठ चले भी गये। बेचारे, उस बूढ़े मोची ने वहाँ के कई

आगन्तुक भक्तों से बाबा के अपने घर आने के विषय में पूछा! कई हंस दिएं, थोड़ों ने उसे डांट दिया और कुछ ने पकड़ कर बाहर कर दिया। सबको वह पियक्कड़ और पागल नज़र आ रहा था। ठीक है, इन श्रीमन्तों के बीच मुझे फँसना ही नहीं चाहिए था। यूं निराश हो अपने चमड़े के टुकड़ों की थैली से टेक लगा कर वह बैठ गया।

कई दिन बीते। उस कोठी पर फिर बाबा आये ही नहीं। उनके दर्शन-भाग्य की रेखा अपने हाथ में नहीं है, मोची निराश हो गया। तब एक दिन भरी दोपहरी में लगभग दो बजे एक बड़ी कार भोंपू बजाती उसके सामने जा खड़ी हुई। मोची थर-थर काँपने लगा, पुलिस के आई.जी. साहब अपने को पकड़ने स्वयं आए होंगे, अथवा म्युनिसिपल कारपोरेशन कमिश्नर ही अपने पर केस जारी करने आये होंगे, सोच कर घबराया। किन्तु कार में—बाबा! हँसते-हँसते उन्होंने उसकी पीठ थपथपा कर कहा, "आओ! गाड़ी में चढ़ जाओ, घर चलो।" उस मोची को अपनी ओर खींचकर उसकी पोटली के साथ ही बाबा ने उसे कार में बिठा लिया। बूढ़े ने मुँह खोलने की चेष्टा की, लेकिन उसके मुँह में शब्द ही न निकले, पता नहीं कैसे बाबा की सूचना से ही कार मुख्य सड़क की गली में घूमती हुई सामने दीखती मिट्टी के तेल के डिब्बों से तैयार की उस मोची की झोपड़ी के सामने रुक गई। उतर कर कीचड़ से बचने के लिए बिछाये ईटों पर से ही बाबा शीध्र गली से आगे बढ़ गये।

मोची ने दौड़कर अपने घर में प्रवेश किया। नहीं-नहीं, तुम नहीं मंगवाओ! कहते हुए बाबा ने अपने हस्त से फलों का सृजन कर, उसके हाथ में दे दिये? विभूति का सृजन कर, उसके बाल-बच्चों के मस्तक पर लगा, आशीर्वाद दिया। यह सपना तो नहीं है, मोची सोचता ही था कि बाबा कार के पास पहुँच गये। मोची उनके समीप पहुँचा, बाबा दया से उसके सिर पर हाथ रखकर अभयदान दे कर चले गये। उसकी टीन में बंधी झोपड़ी मन्दिर के रूप में परिवर्तित हो गयी। कई दिनों तक, उस आप्त जन बाबा कहाँ खड़े थे? वे कहाँ बैठे थे? प्रसाद कैसे उत्पन्न किया? ऐसे प्रश्न पूछ कर, तुम्हारा पुण्य ही पुण्य है, कहते हुए उसके घर के सामने दण्डवत कर चले जाते।

माता सुब्रम्मा और ईश्वरम्मा दोनों को ही श्री सत्य साई की माता मानना होगा। जैसे श्री कृष्ण की दो माता थीं—यशोदा और देवकी। वैसे ही श्री साई की भी दो मातायें रहीं। माँ ईश्वरम्मा आज भी प्रशान्ति निलयम् के मार्ग पर आती-जाती मिल जायेंगी और माता सुबम्मा पार्थिव शरीर छोड़ गयीं।

मां सुबम्मा जिन दिनों प्रशांति निलयम् का निर्माण हो रहा था—उन दिनों बीमार थीं और किसी अन्य गाँव गई हुई थीं। फिर भी एक दिन बैलगाड़ी में बैठ प्रशान्ति निलयम् देखने आयीं और फिर लौट गयीं। इधर श्री सत्य साई बंगलौर गये और वहाँ से तिरूपति जाने का समाचार मिला। इधर माता सुबम्मा की स्थिति खराब हो गई, उनका अन्तकाल निकट आ गया है, ऐसा प्रतीत हुआ।

निस्संतान माता सुबम्मा ने जिस लाड़-चाव से बाबा को पाला हैउसका उदाहरण नहीं मिलेगा। रात्रि को भी सोते समय कई बार उठकर उनको देखना—कहीं जाने पर उनके साथ जाना। वर्ष के प्रत्येक पर्व पर उनकी विशेष पूजा का प्रबन्ध करना आदि। माता सुबम्मा ने बाबा से पहले एक बार कहा था, "मुझे और कुछ नहीं चाहिए, जब मरूं तो तू मेरे सामने होना बस और कुछ भी नहीं।"

माँ सुबम्मा का प्रयाण काल समीप था—बाबा दूर थे परंतु, सुबम्मा के मुख पर दो नाम थे "कृष्ण परमात्मा" "सत्य साई बाबा।" और उस वृद्धा को दृढ़ विश्वास था "साई आयेगा" उसका दिया वचन झूठ नहीं होता। आँखों के सामने बाबा की लीलायें—मन में बाबा की सुन्दर मूर्ति—जिह्वा पर बाबा का नाम। सुबम्मा के प्राण पयाण नहीं कर रहे थे। बाबा तिरूपति से वापिस आये। भक्तों ने माता सुबम्मा के विषय में बताया, बाबा चुप रहे। सूचना मिली, सुबम्मा चल बसी। बाबा चुप रहे। फिर अगले दिन सुबम्मा के गाँव पहुँचे—वहाँ माता सुबम्मा का शरीर पृथ्वी पर रखा था—कारण, अभी कुछ गर्मी शेष था, बाबा सुबम्मा के पास बैठे, फिर धीरे-धीरे पुकारा सुबम्मा...सुबम्मा। उस मृतक को संज्ञा हो गई। सुबम्मा की पथराई आँखें खुल गई, उनमें प्रकाश चमका, शरीर सिहर उठा...उसने अपना कम्पित हाथ चादर से निकाला और बाबा के चरण ढूढ़ने लगीं। बाबा ने मृदुता से उसके

हाथों को दबाया—फिर अपना दिव्य वाम हस्त उसके ओष्ठों पर लगाया—बाबा की उँगलियों में अमृत समान गंगाजल की धार बंधी—सुबम्मा ने तृप्त होकर जल पिया—तृप्य नेत्रों से बाबा को देखा और स्वामी की उपस्थिति में ही शरीर छोड़ कर साई लोक को गई। मानो माता सुबम्मा ने जब देखा कि अब साई को प्रशान्ति निलयम् भाया है गोद की आवश्यकता नहीं तो वह मैया प्रशान्ति निलयम् की गोद में अपने लाड़ले को अग्रिम लीलायें करने के लिए छोड़ अपने गन्तव्य को चली गई।

१९६१ के वर्ष में उत्तर प्रदेश के तत्कालीन राज्यपाल डा. रामकृष्ण राव के आमन्त्रण पर बाबा लखनऊ पधारे थे। श्री रामकृष्ण राव के राजभवन में ही बाबा के निवास की व्यवस्था की गई थी, परन्तु चाहे राजभवन हो या महाराज भवन जब भगवान श्री सत्य साई का निवास होगा तो उसमें अड़चन कैसे हो सकती है। बाबा के आदेश से, उस राजभवन के द्वारा आने वाले भक्तों के लिए खुले थे, बहुत बड़ी संख्या में भक्तजन आये और उन्होंने स्वामी के वचनामृतों से अपने को तृप्त किया। बहुत से रोगी अपने रोग का उपचार पाकर धन्य हुए। उस समय उत्तर प्रदेश की राजधानी में अनेक संघो की स्थापना थी—जैसे केरल संघ, तमिल संघ, आँध्र संघ आदि। बाबा ने सब संघों के एकत्रित हुए सदस्यों को सम्बोधित करते हुए कहा था—

पृथकता का परित्याग करो। मुझे तो यह पृथकता भाती ही नहीं। यह संघ वह संघ आदि कहकर दूर क्यों भागते हो? यह सत्यसंघ ही क्या तुम सब के लिये प्रर्याप्त नहीं है? सत् साधना में लगे रह कर एक दूसरे की सहायता करने का प्रयास करते रहो। दक्षिणामूर्ति का, कोई अलग दक्षिण पंथ नहीं है। उत्तर प्रदेश को अपने प्राण की तरह समझो, इसी में कल्याण है।

उस भ्रमण काल में बाबा अयोध्या भी गए थे। भगवान श्रीराम के अनेक लीलास्थलों, पवनपुत्र हनुमान के मन्दिर, सरयू के तट आदि स्थानों को बाबा ने स्वयं ही भक्तों को बताया कि कहाँ मैंने कब क्या लीला की थी। श्री रामचन्द्र जी के मन्दिर में रामयाण के पारायण को देख, भगवान श्रीराम के अखंड जाप को होते देख बाबा ने कहा—देखो, यहाँ आज भी अजस्र धारा में राम-राम

ध्वनित हो रहा है। इस न टूटने वाली ध्वनि में ही जन-जन का श्वास चल रहा है। लेकिन यह झगड़ा मत करो श्रीराम केवल अयोध्या में ही हैं। यदि ऐसा संकुचित विचार बनाओगे—और झगड़ा करोगे, तो राम अयोध्या से भी चले जायेंगे, राम सर्वत्र है। अयोध्या के पश्चात् बाबा सारनाथ के भगवान बुद्ध के मन्दिर में भी गये थे।

दो अप्रैल को जगत् विख्यात नगरी वाराणसी में बाबा का आगमन हुआ। आज कैलाशवासी फिर मानव देह धर कर अपने ही साधना मन्दिर में आया था। बाबा की उपस्थिति से जैसे वहाँ का वातावरण आनन्द से ओत-प्रोत हो गया था। देवाधिदेव भंगवान पशुपतिनाथ के स्तोत्र गाये जा रहे थे। भक्तजन मधुर कंठ से 'ओ३म् नमः शिवाय' 'ओ३म् नमः शिवाय' की ध्वनि कर रहे थे। तभी भगवान श्री सत्य साई अपने स्थान से तनिक आगे आये और उन्होंने अपने दिव्य हस्त से सृजित करके भस्मी उत्पन्न की। उस भस्मी का लेप अपने हाथ से ही शिवलिंग पर किया। अहा! भगवान शंकर का कल्याण का सूचक वह चिह्न किस प्रकार दमदमा उठा था। तभी बाबा ने फिर हाथ घुमाया और भक्तों को सम्मोहित कर देने वाली सुगन्ध चन्दन को कर से उत्पन्न किया और उसका शिवलिंग पर लेपन किया।

भगवान श्री सत्य साई बाबा के साथ जो भक्त आये थे उनके लिए तो बाबा के चमत्कार परिचित थे, परन्तु उपस्थित जन समुदाय के लिए वह लीला अद्भुत थी। बाबा ने जब चन्दन का लेप शिवलिंग पर किया तब भक्तगण बोल उठे जय हो, जय हो, अभी लीला समाप्त नहीं हुई थी। चन्दन के लेप के पश्चात् शिवलिंग पर चढ़ाने के लिए बाबा ने दिव्य कर से एक मणि मणिक्य रचित आभूषण निर्मित किया। उस आभूषण में तीन रेखाओं को प्रदर्शित करने वाली जो लकीरें थीं वह मणियों से ही बनाई गई थीं। उस त्रिपुण्ड के ऊपर एक ओंकार बना हुआ था और वह भी मणियों से ही निर्मित था। उसका प्रकाश दिन में भी चकाचौंध पैदा करने वाला था।

उस आभूषण को बाबा ने शिवलिंग पर स्थापित कर दिया। भक्तों ने आनन्द विभोर होकर भगवान शिव की आरती गाई। आज विश्वेशवर का महत्व

और भी बढ़ गया था, क्योंकि वह स्वयं ही पूज्य था और स्वयं ही साक्षी। वारणसी के इतिहास में यह दिवस स्वर्णक्षरों में लिखा जाने योग्य रहा। तीन अप्रैल को बाबा त्रिवेणी संगम पर प्रयाग भी गये। उपस्थित भक्तों को स्वयं हाथ से जल देकर कृतार्थ किया। भक्तों के सभी ताप नष्ट हो रहे थे। वे सब आनन्द में मग्न थे। इस अल्पकालिक भ्रमण के पश्चात् बाबा ८ अप्रैल को लखनऊ से वापिस मद्रास के लिए चले गये।

कुछ वर्ष पूर्व बाबा ने ही भक्तों से कहा था, तुम लोग बद्रीनाथ की यात्रा करोगे। उस भविष्यवाणी के दिन से ही अनेकानेक भक्त उस शुभ घड़ी के आने के आकांक्षी थे। ७ जून का शुभ दिन आया और अनेकानेक नगरों से एकत्रित हु भक्तों ने मद्रास के स्टेशनों से दिल्ली के लिए प्रस्थान किया। बाबा ने भक्तों को आशीर्वाद देकर स्वयं भी दिल्ली मिलने का वचन दिया और अगले दिन वायुयान से दिल्ली के लिए चले। भक्तों की गाड़ी अपने निश्चित समय से ६-७ घण्टे देरी से दिल्ली पहुँची। स्टेशन पर जब गाड़ी पहुँची तो बाबा अपने भक्तों को लिवा ले जाने के लिए स्वयं ही स्टेशन पर उपस्थित थे। थके हारे हुए भक्तगणों को जब स्टेशन पर ही स्वागत करने के लिए स्वयं बाबा दिखाई दिये तो वे सब ही अपनी थकान भूल गये। बाबा के दर्शन मात्र से ही उनका यात्रा-कष्ट जाता रहा। बाबा की देख-रेख में ही सबने भोजन किया। यह लो, यह और लो, आदि शब्द कह कर बाबा ने सबको संतोष कर दिया। उनके पश्चात् भक्तों की टोली हरिद्वार के लिए चली।

देहली में बाबा यद्यपि बहुत थोड़ी देर को ठहरे परन्तु उन्हे एक क्षण का अवकाश होता ही नहीं! भक्त-रक्षणा के लिए ही वह आये हैं और उसी में निरन्तर लगे रहते हैं। दिल्ली, कलकत्ता, लखनऊ, बम्बई, कानपुर आदि के अनेक भक्त बाबा के आवास एकत्रित हो गये थे। बाबा की कृपा हो जाये, उनसे दो क्षण को साक्षात हो जाये—बस यही उनकी आकांक्षा थी। अनेकानेक प्रान्तों से आये हुए दर्शकों में से बहुत अधिक व्यक्तियों का नाम ले-लेकर बाबा ने उन्हें अपने पास बुलाया और संतोष प्रदान किया। दूसरे दिन अनेक भक्त और भी इस समुदाय में आ मिले। राज्यपाल डा. रामकृष्ण

राव भी यात्रा के प्रमुख पथिक थे। १३ जून को संध्या आरती के समय समस्त भक्तों ने बाबा की उपस्थित में परम पावनी भागीरथी की आरती गायी। बाबा एक ऊँचे मंच पर विराजमान थे, समक्ष ही कल-कल करती हुई गंगा बह रही थी तभी राज्यपाल और उनकी पत्नी ने भगवान साई की आरती उतारी, सहस्रों जन जय जयकार कर उठे।

भगवान साई के साथ भक्तों का दल देवप्रयाग पहुँचा। यहाँ भगवती, भागीरथी और अलकनंदा का संगम स्थल है। रात्रि को इस दल का निवास श्रीनगर में हुआ। बाबा के स्वागत में वहाँ के निवासियों ने लोक नृत्य और गायन का सुन्दर कार्यक्रम आयोजित किया था। दूसरे दिन मोटर, बसों और अनेक प्रकार की व्यक्तिगत कारों में चलने वाले इस समुदाय ने सवेरे का जलपान रूद्रप्रयाग में, अन्य दैनिकचर्चायें नन्दप्रयाग स्थित कंडवाश्रम में एवं भोजन पीपलकोट में किया। इस यात्रा के प्रारम्भ होने के समय बाबा ने कहा था—निश्चिन्त होकर चलो, वर्षा होकर मार्ग अवरूद्ध होने का भय त्याग दो, तुम्हारे वापिस ऋषिकेश पहुँचने तक वर्षा नहीं होगी। और वर्षा के देवता ने भगवान सत्य साई के आदेश का अक्षरशः पालन किया। यात्रा के इन दिनों में कभी वर्षा नहीं हुई और पर्वत यात्रा का यह कार्यक्रम आनन्दपूर्ण हुआ।

१३ तारीख को मोटर गाड़ियों का यह काफिला जोशीमठ की ओर बढ़ा। यहाँ से बद्रीनाथ केवल १८ मील दूर रह जाता है। यह १८ मील की यात्रा दर्शकों को पैदल ही करनी होती है। मोटरों का अंतिम पड़ाव नन्दप्रयाग में हुआ और बाबा ने भक्तों को अलकनन्दा और मन्दाकिनी के संगम पर स्नान करने को प्रोत्साहित किया। पिघले हुए हिमखण्डों का मुक्तापिण्डों जैसा शीतल जल पर्वत की भीमाकार चट्टानों से टकराता हुआ भयंकर निनाद करता बहता है, उस शीतल जल में उंगली डालने पर ही ऐसा लगता है जैसे रक्त जमने लगा हो, भक्तों ने प्रसन्न भाव से स्नान किया।

१४ तारीख की ऊषाकाल में ही यात्रियों का यह दल टट्टूओं और घोड़ों पर सवार होकर गन्त्वय की ओर चल पड़ा। वृद्ध पुरुषों के लिए डांडियों का प्रबन्ध था। भगवान श्री सत्य साई बाबा भी एक कुशल घुड़सवार की तरह

पहाड़ी अश्व पर सवार होकर यात्रियों का मार्ग दर्शन करते सबसे आगे-२ चले। १८ मील की यह पगडंडी बड़ी ही कठिन और भयप्रद है। दुधारू मार्ग, दुर्गम चढ़ाई और समतल पृथ्वी पर चलने वाले अनाभ्यासी यात्री। बाबा सबका उत्साह वर्द्धन करते हुए आगे बढ़ते रहे। पहले दिन ११ मील की यात्रा करके यह दल लामबाजार नामक स्थान पर रूका। १५ तारीख को फिर प्रातः काल ही यात्रा प्रारम्भ हुई तथा दोपहर होते-२ यह दूरी भी पूरी कर ली गयी। मार्ग में जब यह दल तनिक विश्राम के लिए रूका था, तब तक बाबा एक शिला पर विराजमान थे। भक्तों का समुदाय बाबा की हर्षवर्द्धक बात सुनकर प्रसन्न हो रहा थाष अपनी थकान को भूलता जा रहा था तभी उस बटिया के पार्श्व में बसे एक छोटे से गाँव से एक वृद्धा शीघ्रता से चलती हुई और शिला पर बैठे हुए बाबा की ओर अपलक देखती रही। फिर धीरे-धीरे भगवान के निकट आई, उनके चरणों में पड़ी, अश्रुपूरित नेत्रों से देखा और बड़बडाने लगी—

हाँ आप ही हैं। आपके लिए, ही आज की तिथि में इस शिला पर बैठे हुए मुझे दर्शन होंगे, स्वप्न में कहा गया था। इस युग का अवतार चाँद की इस स्थिति में इस शिला पर आकर बैठेगा, हाँ प्रभु आप ही तो थे। आदि, आदि।

उसने फिर बाबा से पूछा, स्वामी मैं भी आपके साथ बद्री चलूँ। बाबा ने सहास्य कहा, वहाँ किससे मिलोगी? जिससे वहाँ मिलना है क्या वह यहाँ नहीं मिला? बाबा की बात सुनकर उनकी परिक्रमा करके, चरणों का स्पर्श करके वह अपने निवास को चली गयी। बाबा ने भी बताया था इस समय सृष्टि में कुछ जीव ऐसे हैं जिनको भगवान के अवतार होने का ज्ञान नहीं है और उस आत्माओं में से ही यह एक महान आत्मा थी, जिसको भगवान के अवतार होने का ज्ञान पहले से ही था।

१५ और १६ तारीख को बाबा ने भक्तों को अपनी इच्छानुसार बद्रीनाथ जी की पूजा आदि करने तथा दर्शनीय स्थानों को देखने की अनुमति दे दी थी और उन दो दिनों में बाबा ने बाहर से आये अनेक जिज्ञासुओं, भक्तों तथा

दर्शनार्थियों से व्यक्तिगत साक्षात करके सन्तुष्ट किया। सिविल, अधिकारी मिलिट्री के वरिष्ठ गण तथा बद्रीनाथ मंदिर के कार्यकर्ता सभी बाबा से साक्षात् करके धन्य हो गए। १७ तारीख को संध्या आरती में बाबा ने भी मन्दिर के प्रांगण में दर्शन दिये और उस ही दिन बद्रीनाथ कमेटी की ओर से सेवार्थ अस्पताल में एक्सरे की यूनिट का उद्घाटन किया। बस सबसे पहले उस अस्पताल के डाक्टर महोदय ने ही बाबा से अपना एक्सरे करवाया।

१७ तारीख का दिन बद्रीनाथ के इतिहास में एक स्वर्णिम दिन था। उस दिन प्रातः काल जब अर्चना कार्यक्रम चल रहा था, तब बाबा भी मूर्ति के समक्ष उपस्थित थे। अर्चना के मध्य ही बाबा ने अपना दैविक कर तनिक ऊंचा उठाया और उपस्थित भक्तों ने आश्चर्य मुद्रा में देखा, बाबा के हाथ में भगवान नारायण की चतुर्भुज मूर्ति थी, शंख, चक्र, गदा, पदम् लिये वह मूर्ति, कला में अपना उदाहरण स्वयं ही थी, तभी बाबा के दाँये कर से सहस्र दल कमल दृष्टिगोचर हुआ—स्वर्ण निर्मित सहस्र दल कमल अपनी आभा से दर्शकों की आँखों में चकाचौंध उत्पन्न कर रहा था। अभी सब लोग यह विचार कर ही रहे थे कि आज बाबा ने अपने कर कमल से इस सहस्र दल कमल को क्यों उत्पन्न किया है, तभी बाबा का हाथ पुनः घूमा और उस दिव्य कर में एक शिवलिंग दृष्टिगोचर हुआ। यह वही शिवलिंग था जो कभी शंकराचार्य ने मंदिर में स्थापित किया था—उस शिवलिंग पर नेत्र का चिह्न बना हुआ था—यह वही शिवलिंग था जिसको आर्य संस्कृति पर संकट के समय रक्षा के लिए केन्द्र की स्थापना करने हेतु स्वामी शंकराचार्य ने लगभग १२०० वर्ष पूर्व, इस मन्दिर में स्थापित करके सनातन संस्कृति का शंखनाद किया था।

भक्तों सहित बाबा धर्मशाला में वापस चले आये। भजन प्रारम्भ हुआ। नेत्रलिंग की अर्चना की गयी। अभिषेक के मन्त्रों से शिवलिंग का स्तवन हो रहा था। पुरुष-सूक्त का गायन हो रहा था, बाबा के दिव्य कर से उत्पन्न गंगोत्री का जल उस शिवलिंग पर गिर रहा था। अभिषेक के पश्चात् बाबा ने पुनः अपने कर को हिलाया और उसके बाद एक के पश्चत् एक बिल्वपत्र, स्वर्ण निर्मित बिल्वपत्र, गिरते गये। बिल्वपत्रों के पश्चात् सुगन्धि युक्त पुष्पों की

वर्षा बाबा के हाथ से शिवलिंग पर होती रही। सब ही उपस्थित जनों ने शिवलिंग के दर्शन किये, उस पर पुष्प चढ़ाये और अपने-अपने भाव से अर्चना की। श्री रामकृष्ण राव महोदय ने भक्तों के उस पूजन में अग्रणी भाग लिया। पूजा अर्चना के पश्चात् उस शिवलिंग को उस ही पूर्व स्थान पर भेज दिया गया और वह अपने स्थान से बाबा के संकल्प के पश्चात् अदृश्य हो गया।

उपस्थित भक्तों में सभी जाति और वर्ण के, सभी प्रान्तों के जन सम्मलित थे। आज भगवान शिव के उस पवित्र नेत्रलिंग के पूजन का सौभाग्य सभी को मिला था। पुराना सिद्धान्त, कि केवल कुछ ही गिने चुने व्यक्ति उस लिंग पर जल चढ़ा सकते हैं, पुष्पापर्ण कर सकते हैं स्वतः ही टूट गया था। सभी मानव बराबर हैं—सभी उस परम पिता की सन्तान हैं। सभी को पूजा करने का बराबर अधिकार है। जाति और सीमायें मनुष्य ने अपनी सुविधा और कार्य को सुचारू रूप से चलाने के लिए बनाई हैं। किसी भी सिद्धान्त में विश्वास जमाये, परन्तु सबको पहुँचना एक ही लक्ष्य पर है। आज की अर्चना विचित्र थी, आज का पूजन ढंग विचित्र था; आज के चमत्कार विचित्र थे अद्भुत तथा अद्वितीय। स्वयं शिव ही—शिवलिंग—अर्थात कल्याण के सूचक चिह्न के अर्चन को सिखाने के लिए सन्नद्ध हो उठे थे। भक्तों के मन का तोष कैसे वर्णन किया है—वह कह नहीं सकता—जिससे कहा जाता है—उसने अनुभव नहीं किया। ऐसी विचित्र अनुभूति थी उस दिन के पूजन की।

आज भगवान सत्य साई ने, औधड़ शिव और माता शक्ति के मिश्रित अवतार श्री सत्य साई ने, मानव शरीर में आये माधव ने, लोक रक्षण के निमित्त आये स्वामी ने, परमपिता ने स्नेह वश भूखों के लिए भोजन वितरण का आयोजन किया। सुस्वादु भोजन देकर बद्रीनाथ में उपस्थित सभी भूखे जनों को तृप्त किया गया। उस दिन बद्रीनाथ में वह दृश्य उपस्थित था जो प्रतिदिन पुट्टपर्ती में प्रायः और सांय उपस्थित रहा करता है। जिस प्रकार बाबा स्वयं अपने ही हाथों पुट्टपर्ती ग्राम में स्थित प्रशान्ति निलयम् में भूखों को भोजन कराते हैं, उसी ही प्रकार उस दिन बाबा ने बद्रीनाथ की पवित्र स्थली

पर भूखों को भोजन कराया। भोजन के पश्चात् सब ही दरिद्र-जनों को कम्बल बाँटे। कम्बल बंटते गये और दरिद्र याचकों की कतार अब भी बनी हुई थी। पूरे बद्रीनाथ में किसी दुकान पर भी कोई कम्बल शेष नहीं था। सब ही खरीद कर बाँट दिये गये थे—फिर बाबा के आदेश से जितने याचक और बच गये थे, उनको कम्बल का मूल्य दिया गया। प्रत्येक याचक सन्तुष्ट होकर भगवान श्री सत्य साई की जय जयकार करता हुआ गया।

बद्रीनाथ के तीन दिन के अल्प-निवास में ही वहाँ के निवासियों, उपस्थित भक्तों की आस्था भगवान सत्य साई के प्रति कितनी प्रबल हो उठी थी उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। बाबा ने जब प्रयाण करने के लिए आदेश दिया तो याचक, वहाँ के निवासी, मन्दिर के अर्चक, और अन्य साधक भावुक हो उठे। उनके नेत्रों में अश्रु थे, करबद्ध खड़े भक्तों का एक ही भाव लक्षित हो रहा था—स्वामी! अब कब दर्शन होंगे। प्रभु अब कब आओगे! बहुत दूर तक बाबा को पहुँचाने के लिए भक्तों का समूह उनके साथ-२ आया और बार-२ कहने पर पर्याप्त दूरी से लौटा। भगवान सत्य साई के साथ लगभग १०० यात्रियों का दल यात्रा पर गया था, परन्तु इस पूरे यात्रा काल में कोई भी यात्री भगवान की कृपा से ही न तो रुग्ण हुआ न उसे पर्वतीय प्रदेश में हो जाने वाली कोई बीमारी हुई और सब ही स्वस्थ तथा प्रसन्न भाव से वापिस लौटे। लौटते हुए सत्य साई हरिद्वार से नैनीताल भी गये थे तथा वहाँ स्वामी विद्यानन्द जी द्वारा स्थापित गीता सत्संग में भी गये। अनेक साधकों, जिज्ञासुओं का समूह वहाँ पहले से ही उपस्थित था। बाबा ने सबको ही सन्तोष दिया। सबकी जिज्ञासाओं को शान्त किया।

चार जुलाई को बाबा प्रशान्ति निलयम् वापिस पहुँच गये। वहाँ के भक्तों को तो जैसे उनके प्राण ही वापिस मिले हों। वहाँ उपस्थित सब ही जन भगवान की बद्री यात्रा में क्या-क्या हुआ, यह सब कुछ जानने को उत्सुक थे। दयालु साई ने स्वयं ही अपने मुख से भक्तों के बीच बैठकर बद्रीनाथ की यात्रा का विशद वर्णन सुनाया। एक-एक स्थान का सजीव वर्णन किया और भक्त समुदाय आनन्द में विभोर होता रहा। जो सुख साथ जाने वाले यात्रियों ने

कठिनाई सहकर उठाया था—वही सुख—वही दृश्य प्रशान्ति निलयम् में उपस्थित भक्त बाबा के मुख से यात्रा का वर्णन सुनकर कल्पना में उठा रहे थे। तभी बाबा ने गंगोत्री का जल उत्पन्न किया और प्रत्येक भक्त को अमृत पान कराया। बाबा ने कहा—मैंने नारायण की मूर्ति फिर से बद्रीनाथ के पवित्र जल पर स्थापित की है। तुम सब भी अपने-अपने हृदय में उस नारायण मूर्ति को स्थापित करो, तभी कल्याण होगा।

बिन कारण जो द्रवहिं दीन पर

डा. डी.जे. गाधिया ने लिवरपूल से लिखा था—मैं १२ सितम्बर को बाबा के आदेशानुसार लन्दन पहुंचा। मेरे लन्दन पहुंचने का उद्देश्य "टोपोकन मेडिसन एण्ड हाइजीन" का कोर्स करने के लिए विद्यालय में प्रवेश लेना था, परन्तु मुझे विद्यालय में प्रवेश नहीं मिला। तब मैं ग्लासगो में प्रवेश के लिए गया, परन्तु वहाँ से भी मुझे निराश लौटना पड़ा। दुःखद परिस्थितियों में मैं एडिनबर्ग गया और वहाँ भी मुझे बताया गया कि देरी हो चुकी है। सब ही स्थानों पर बताया गया कि मुझे देरी हो चुकी है, सब ही विद्यालयों ने प्रवेश बन्द कर दिए हैं और उस निराशा की स्थिति में डूबते हुए मेरा मन क्रंदन कर उठा—बाबा—बाबा—आप वहाँ हैं इस अनजान देश में मेरा कोई नहीं। आपके इंगित पर ही तो यहाँ आया था—अब मेरी सहायता कौन करेगा? आदि-आदि। वहाँ मेरा मित्र नहीं था, कोई यह बतलाने वाला नहीं था कि मुझे इसके पश्चात् कहां प्रयास करना चाहिये।

रात्रि को स्वपन्न में गहरे लाल रंग का चोगा सा पहने स्वामी आये और मुस्कराते हुए बोले—भय मत करो। प्रातःकाल उठकर लिवरपूल जाओ—वहां तुम्हारे लिए मैने एक सीट सुरक्षित करली है, वहां तुम्हारा प्रवेश हो जायगा, निराश क्यों होते हो। जब मैं हूं तो भय क्यों? जब तुम्हें मैंने ही भेजा था तो फिर कैसे तुमको प्रवेश नहीं मिलेगा? प्रातःकाल होते ही मैंने लिवरपूल के लिए गाड़ी पकड़ी और लिवरपूल पहुंचा, प्रशासकीय सचिव के समक्ष पहुंचकर मैने अपनी आकांक्षा उसको बतलाई। वह सेक्रेटेरी मेरी ओर देखने लगा—और आश्चर्यपूर्ण मुद्रा में बोला, तुम कितने सौभाग्यशाली लड़के हो। आज हमारे यहाँ प्रवेश का अन्तिम दिन है जिसमें कुछ घण्टे ही शेष हैं और हमारे यहाँ स्थान भी समाप्त हो चुके थे, परन्तु तुम्हारे आने के साथ ही साथ एक विद्यार्थी का पत्र भी हमें मिला जिसका प्रवेश हो चुका था कि वह

विद्यालय नहीं आयेगा और न ही पढ़ सकेगा। केवल उसके पत्र के कारण ही अभी एक सीट खाली हुई है और ठीक उस सीट के खाली होने के समय तुम आ गये हो। तुम्हारा प्रवेश कर लिया जायगा। तुम्हें यह सौभाग्यशाली अवसर प्राप्त करने के लिए बधाई।

उपरोक्त घटना से भगवान के भक्त-रक्षण के आश्वासन का आभास मिलता है। "योगक्षेम वहाम्यहम्" शब्द के अर्थ समझने पड़ने लगते हैं। एक भक्त ने लिखा था—वह पार्थ के सारथी बन कर उसको युद्ध में विजय दिला सकते हैं—वह धन्ना भगत के लिए घर से रोटी ला सकते हैं; उसका हल चला कर उसका खेत ठीक कर सकते हैं। वह नरसी का भात देने जा सकते हैं, उसके लिए जब खौलता हुआ पानी भेजा जाय तो बादलों से वर्षा कर सकते हैं, गोस्वामी तुलसीदास की प्राण समान रामचरितमानस को चोर चोरी न कर ले, इसलिए उनकी कुटिया के बाहर धनुष बाण लेकर पहरा दे सकते हैं और भगवान ने तेरी स्वयं की रक्षा की थी। बात १९४० की है...उर्वाकोण्डा और चैकला गीर के जिलों के मध्य अकाल की स्थिति उत्पन्न हो रही थी और राजकीय सरकार ने अकाल पीड़ित जनों की सहायता के एक कार्यालय उसी क्षेत्र में खोल दिया था। उस कार्यलय में मेरा पुत्र भी कर्मचारी के नाते नियुक्त हुआ था। अकाल पीड़ितों की सहायता के लिए जो कर्मचारी आदि रखे गये थे, उनको पाक्षिक अथवा मासिक रूप से धन का भुगतान किया जा रहा था। वेतन देने के लिए मेरा पुत्र सरकारी धन लगभग १०.००० गूटी के खजाने से लाया। उसके साथ पुलिस के दो सिपाही भी थे तथा उन लोगों ने धन लाकर घर में एक बक्स में रख दिया जिसको कि उनको दूसरे दिन कर्मचारियों में बाँटना था। निकट के गाँव में उस दिन प्रसिद्ध ड्रामा हो रहा था और उसकी सूचना मिलते ही मेरा पुत्र और दोनों सिपाही, ड्रामा देखने गये। उन लोगों ने यह भी ध्यान नहीं दिया इतनी बड़ी राशि को जिस सन्दूक में रखा गया गै उस,का ताला भी बन्द नहीं है और न ही किसी को देखभाल के लिए या उसकी उपस्थित के लिए बताया गया है।

प्रतिदिन की तरह शाम को घूमने के बाद वापिस आया और अपने पूजा

घर में जाकर भजन कार्यक्रम मे लग गया, अन्य बालक अभी तक खेल कर वापिस नहीं आये थे। मैने ध्यान और भजन प्रारम्भ ही किया था कि घर के बाहर किसी के धीरे से लाठी रख कर घूमने की ध्वनि आयी-जैसे कोई चौकीदार हाथ में लाठी लिए किसी स्थान का पहरा दे रहा हो, खास तौर से लाठी को जमीन पर रखा जा रहा था और उससे आवाज हो रही थी। मुझे अचम्भा हुआ क्योंकि मेरी गली में कभी इस प्रकार के पहरे की अथवा चौकीदार की आवश्यकता हुई ही नहीं थी। मैं आश्चर्य में उठकर बाहर गया और दूर-दूर तक इधर-उधर देखा, परन्तु वहाँ कोई भी नहीं था। एक स्त्री भी उधर जा रही थी, तब मैने उससे पूछा, क्या कोई व्यक्ति इधर से गया था, क्या उसेक हाथ में लाठी या डन्डा था? उसने उत्तर दिया—नहीं भाई, इधर से तो कोई भी नहीं गया। मैं फिर वापिसजाकर पूजाघर में बैठ गया और अपना कार्यक्रम चलाने का उपक्रम करने लगा। तभी फिर वैसी ही ध्वनि आनी शुरू हुई—मैंने अपनी पत्नी को पुकारा और कहा, यह आवाज कैसी आ रही है? उसने उत्तर दिया ध्वनि का तो मुझे मालूम नहीं—हाँ पुत्र आया था, थोड़ी देर पहले और कुछ धन आदि रखकर कहीं चला गया है अपने साथियों के साथ, बस इतना ही मुझे पता है।

पत्नी की बात सुनकर मैंने कहा, उसने घन कहाँ रखा है? और यह कहते हुए उसके साथ कमरे में गया, जहाँ सन्दूक में वह धन रखा गया था, सन्दूक खुला पड़ा था, उसमें कोई भी ताला नहीं था। खोल कर देखा तो थैले में दस हजार रुपये रखे पाए, वह भी उसमें ऊपर ही रखे हुए थे। इतनी बड़ी धनराशि को देखा तो स्तब्ध रह जाना पड़ा और फिर अपने पुत्र की लापरवाही की सोचकर बड़ा दुःखी हुआ। ओह! भगवान साई मेरे धन की रक्षा कर रहे थे। वह स्वयं लाठी की आवाज करते हुए यहाँ घूम रहे थे। ओह! स्वामी आपको कितना कष्ट हुआ हमारे लिए। यह विचार करके मेरे नेत्रों में अश्रु आ गये। मैंने सन्दूक को बन्द करके धन को सुरक्षित स्थान पर रख दिया। ड्रामा देखकर मेरा पुत्र और दोनों सिपाही तो कहीं सुबह को वापिस आये।

कुछ दिनों के पश्चात् जब हम पुट्टपर्ती गये तो बाबा ने हँसते हुए कहा, हाँ, मैं ही उस दिन तुम्हारे धन की चौकीदारी कर रहा था इसमें में आश्चर्य की क्या बात है—भक्तों की रक्षा के लिए ही तो मैं मानव देह धर कर, तो कभी निराकर ही रहकर सब कुछ करता रहता हूँ। उस धन के जो खो जाने पर तुम किसी प्रकार भी पूरा नहीं कर सकते थे उसकी ओर तुम्हारा ध्यान आकर्षिक करने के लिए कुछ न कुछ तो करना ही था। बाबा की कृपा से भक्त गद्‌गद् हो गया।

जिन भक्तों ने यह विचार पक्का कर लिया—

अब सौंप दिया इस जीवन का सब भार तुम्हारे हाथों में,
मेरी जीत तुम्हारे हाथों में और मेरी हार तुम्हारे हाथों में।

उसके लिए यदि स्वामी चौकीदारी भी करें तो क्या आश्चर्य?

वर्ष १९५८ में २३ नवम्बर को भगवान श्री सत्य साई की वर्षगाँठ उत्सव में भाग लेने के लिए बंगलौर के श्री एस. आर. वी. भी सकुटुम्ब आये थे—२५ नवम्बर को दोपहर के लगभग १२.३० बजे उन्होंने बाबा से जाने की अनुमति ली और कार से बंगलौर के लिए वापिस चले। उनकी छोटी बच्ची गीता सुधा कार की पिछली सीट पर लेटी थी या सो रही थी, तभी अचानक उसने भयंकर रूप से चीत्कार की और उसके होंठ आदि नीले पड़ गये। उसकी माता ने भयभीत होकर उसको अंक में दाब लिया परन्तु सब व्यर्थ। कार रोक दी गयी—निकटवर्ती गाँव के आने-जाने वाले व्यक्ति रुक गये बच्ची को देखकर अपने-२ विचार बताने लगे। कुछ ने उपाय भी बताये, परन्तु सब व्यर्थ। अब उस बालासमुद्रम वेलपल्ली गाँव के बीच कौन सी सहायता मिल सकती थी। लोगों ने देखा बच्ची मर चुकी है। उसमें प्राण का संकेत नहीं है। यह घटना उस गाँव के सड़क पर घट रही थी, तब ही प्रशान्ति निलयम् में बैठे हुए बाबा ने अपना शरीर एक प्रकार से हम लोगों की भाषा में छोड़ दिया अर्थात् बाबा का शरीर हमारे दर्शकों की दृष्टि में निश्चेष्ट

हो गया और जब बाबा वापस आये तो उन्होंने ही यह घटना बताई। एस. आर. वी. अपने मार्ग पर मोटर से जा रहा था-अभी-२ तो वह मुझसे अनुमति लेकर गया ही है दो घण्टे पूर्व। उसको मैंने भस्मी भी दी थी और अभी मोटर में ही उसकी पुत्री का शरीरान्त हो गया। वह दुःख की स्थिति में सड़क पर आने वालों से सहायता की, कुछ उपचार की आशा कर रहा था— उसका मस्तिष्क भी काम नहीं कर रहा था क्योंकि जो कुछ हुआ वह इतना आकस्मिक था कि जिसको विचार में नहीं लाया जा सकता, तभी मैं वहाँ उसकी सहायता के लिए गया था।

एक बूढ़े के रूप में बाबा उस भक्त की कार के पास प्रकट हुए। बहुत बड़ी भीड़ वहां पर पहले से ही थी। तभी भीड़ में से एक बूढ़ा आया, बच्ची को उसने अपनी गोद में देने को कहा—फिर स्वयं ही बोला, तुम सत्य साई के यहाँ से आ रहे हो—उसकी दी हुई भस्मी भी तुम्हारे पास जरूर होगी—लाओ तनिक भस्मी तो दो। भक्त एस. आर. वी. ने भस्मी में से तनिक सी भस्मी उस बुढ़े को दी और कुतूहल से उस को देखने लगे। उस वृद्ध ने भस्मी बालिका के मुख पर लगायी और अपने हाथों पर धर कर उसको तनिक ऊंचा उठाया, तभी बालिका रोने लगी—उसमें प्राणों का संचार हो गया था—उसने फिर रुदन शुरू कर दिया था—देखने वाले विस्मित थे—अरे! अभी तो इस बालिका में स्वास भी नहीं था और अभी इस बूढ़े के छूते ही, हिलाते ही यह रोने लगी। तभी बालिका के पिता ने बूढ़े को कुछ न कुछ देने की भावना से एक रुपया देने का प्रयास किया, परन्तु बूढ़े ने लेने से मना कर दिया। फिर भक्त एस.आर.वी. ने बाबा की दीहुई पाँच छः नारंगियों में से एक नारंगी उस वृद्ध को दी ओर उसका धन्यवाद अदा किया। सब लोगों के देखते-देखते ही वह वृद्ध कहीं चला गया और भक्त एस.आर.वी. अपने स्थल की ओर चले गये।

बाबा ने शरीर में पुनः आने पर उपस्थित भक्तों को बताया कि घटना किस प्रकार घटी। फिर अपने हाथ में नारंगी दिखाकर बाबा कहने लगे—देखो मुझे ही मेरी वस्तु देकर कृपा कर रहा है। दूसरे दिन एस.आर.वी. ने पूरी घटना

का वर्णन अपने पत्र में किया और बाबा से अपने साथ हुई कृपा की गोपनीयता जाननी चाही थी। भक्तों ने फिर एक बार गोस्वामी जी के शब्दों के सार को जाना था—

सिव को चाप सके कोई तासू। बड़ रखवार रमापति जासू।।

अनेक भक्तों को उनके आग्रह पर, उनके संचित कर्मों के आधार पर साई ने कृपा करके दशावतारों के दर्शन कराये हैं। भक्तों ने साई के इस मानव शरीर में ही दशावतारों के दर्शन किये हैं। एक बार माता को दर्शन कराये और जब विष्णु, मत्स्य, कुर्म, वाराह अवतारों के दर्शन कर चुकी तथानरसिंह अवतार का सामने आना आरम्भ हुआ तो माता तथा अन्य उपस्थित भक्त चीत्कार कर उठे, उस नरसिंह अवतार का रूप इतना भंयकर था कि उसकी ओर देखाना भी दुष्कर था। भक्त थर-थर काँप रहे थे। तभी सबने कहा—बस स्वामी! बस अब और अधिक देखने की सामर्थ्य हमारी नहीं। ——

एक बार करनम कुटुम्ब के एक वृद्ध सदस्य ने, बाबा से प्रार्थना की कि वह दशावतार देखना चाहते हैं। बाबा ने कहा, तुम्हारी देह दुर्बल है, उस प्रसन्नता को सहन नहीं कर सकती, इसलिए तुम इस विचार को छोड़ दो। परन्तु वह भक्त अपनी बात पर अडिग रहे। उन्होंने शरीर छोड़ देना ठीक समझा परन्तु दशावतारों के दर्शनों की लालसा नहीं छोड़ी। एक दिन बाबा उनको पवित्र चित्रावती नदी के तीर पर ले गये और उनसे जल में झांकने को कहा, उन्होंने जल में देखा, बाबा के केश दिखाई दे रहे हैं। फिर उन केशों के रूप में परिवर्तन हुआ और उनको क्रमशः अवतारों के दर्शन प्रारम्भ हुए। उन्होंने दर्शन तो दशावतारों के किए, परन्तु उस दिन ही उनकी स्थिति बदल गई और थोड़ा समय बीतते ही उन्होंने शरीर छोड़ दिया।

कमलापुर से आने वाले भक्त बाबा के सम्मुख उपस्थित थे, तभी बाबा ने सहास्य कहा—कृष्ण का मुरली गान सुनोगे? भला ऐसा कौन अभागा होगा जो ना करता। बाबा ने कहा—आओ, मेरे निकट आओ और मेरे वक्ष पर अपने कान लगाओ। सब ही आगे बढ़े, सबने बाबा के शरीर पर अपने कान लगा दिए। जिसको जहाँ भी स्थान मिला बाबा से चिपक सा गया और तभी

सभी भक्तों ने सुना—कहीं दूर से मुरली की धुन सुनाई दे रही है। सब ही सुनते रहे और उस मधुर कर्णप्रिय ध्वनि को सुनते-२ मदहोश आवेश में अन्त में मूर्छा से ग्रसित हो गये। उनको मूर्छित हुआ जान कर बाबा ने अपने दैविक कर से अक्षत उत्पन्न कर उन पर छिड़के और फिर धीरे-धीरे भक्तगण स्वाभाविक स्थिति में आ गये।

कन्हैया की मधुर मुरली, यमुना तट पर बजने वाली रास रचैया की मीठी तान, वृजांगनाओ को विवश कर अपने पास बुला लेने वाली मुरली। गौएं चराने के समय बजायी जाने वाली मुरली तान कैसी थी—कौन जाने—वह सौभाग्य जिसको मिला होगा—वही उस रस के स्वाद को कह पायेंगे, कुछ न कुछ अभिव्यक्त कर पायेंगे। धन्य है उन भक्तों का भाग्य जिन्हें बाबा के इतने निकट आने का अवसर मिला।

एक दिन भगवान सत्य साई त्रिचनापल्ली के भक्तों के आमन्त्रण पर वहां पधारे। संध्या को साधारण सभा का आयोजन किया गया था। भक्तों का विशाल समुदाय भगवान सत्य साई के भाषण सुनने आया था। तभी भगवान साई मंच पर आये और उन्होंने भक्तों को सदुपदेश देना प्रारम्भ किया। मंच के निकट ही एक सज्जन और उनके साथ एक युवक भी खड़ा था। उन सज्जन के मन में अविश्वास, नास्तिकता के भाव अपनी पराकाष्ठा पर थे। वह भगवान की मधुर वाणी का रसास्वादन करने के स्थान पर उनकी प्रत्येक बात पर दोष ढूँढ़ लेने का प्रयास कर रहे थे। घटघट वासी भगवान साई ने उसके भावों को शुद्ध करने के लिए उसके पास खड़े जन्मजात गूंगे और बहरे उनके भतीजे को संकेतसे अपने पास बुलाया श्री सत्य साई का संकेत देख वह गूंगा और बहरा सेवक मंच पर ही भगवान के पास जा पहुँचा। जनता आश्चर्य के साथ भगवान के इस व्यवहार को समझने का प्रयास कर रही थी। तभी माइक के सामने भगवान ने उस युवक से पूछा, तुम्हारा नाम क्या है? युवक ने अपने शुष्क गले से बोलने का प्रयास किया और उपस्थित सहस्त्रों जनों ने सुना, युवक बोला 'वेंकट नारायण'।

युवक को आज अपने स्वयं बोलने पर जो आश्चर्य हुआ, उस आश्चर्य की धारा में वह स्वयं ही अधिक उत्साह से बोला वेंकट नारायण, वेंकट नारायण। जनता ने देखा युवक बड़े उत्साह के साथ अपना नाम बता रहा है। परन्तु वास्तविकता क्या है कोई न जान सका। युवक के चाचा का मस्तक नीचे को झुकता जा रहा था, नीचे और नीचे। बाबा ने उस युवक को फिर से अपने स्थान पर जाने को कहा। बाबा का भाषण चलता रहा और कुछ समय पश्चात् बाबा भक्तों को आशीर्वाद देकर जाने लगे। उस युवक के चाचा ने बाबा के चरण पकड़ लिए। आज उनका अविश्वास खंड-खंड होकर बिखर गया था, उनकी नास्तिकता लुण्ड-मुण्ड हकर सदा के लिए नष्ट हो गई थी। बाबा का अभय हस्त सबके लिए उठा और बाबा चले गये।

तब जनता ने उस व्यक्ति से ही महान चमत्कार को जाना और आनन्द में मग्न हो गई। भगवान सत्य साई जा चुके, तब लोगों को घटना का पूर्ण विवरण मिला। भगवान की जय-जयकार हो उठी। भक्तों ने भगवान की महिमा को जाना। प्रातःकाल होने से कई घण्टे पूर्व मध्य रात्रि के निकट ही उस गली में जहां भगवान को ठहराया गया था—कई सौ गूंगे और बहरों की भीड़ जमा हो गई थी सब ही इस आशा में थे कि आज वाचाल होकर जायेंगे। रात्रि के मध्य पहर में ही भगवान ने ऊपर से भीड़ को देखा, तनिक हास्य किया और फिर दूसरे दरवाजे से आकर अपनी मोटर से जहाँ जाना था, वहाँ चले गए। एक पुरानी घटना है कि अवतारी पुरुष की ठोकर से ही एक मृतक जी उठा था और जब उसने कहा था कि आपकी तो ठोकर से मृतक उठ जाता है अब आप ठोकर मार मृतकों को ही जीवित करते जाइये। तब उन्होंने उत्तर दिया था—

इस मृतक को जीवित होना ही था। इसके कर्मानुसार इसको यह फल मिलना ही था, मुझे इस समय इसको ठोकर मारनी ही थी। इस चमत्कार से संसार को मेरे धरा पर आने की सूचना मिलनी ही थी। परन्तु इसका यह तो तात्पर्य नहीं कि अब कोई मरेगा ही नहीं, इसका यह तो अर्थ नहीं कि कर्मभूमि से कर्म विधान नष्ट हो जायेगा।

कदाचित उन पुरातन शब्दों के सार को इंगित करते हुए श्री सत्य साई मौन भाव से अपने गन्तव्य को चले गये। महिमा के क्षण भर को दर्शन कराकर, एक गूंगे को वाचा शक्ति प्रदान करके भगवान ने त्रिचनापल्ली से प्रस्थान किया था।

त्रिचनापल्ली की भूमि आज भी गोस्वामी तुलसी के इस पद को स्मरण करती है—

मूक होई वाचाल—पंगु चढ़ई गिरवर गहन।
जासु कृपा सोदयाल—द्रवहु सकल कलिमल दहन।।

त्रिचनापल्ली की ही घटना और भी है जो चमत्कार की ओर आकर्षित होने वालों के लिए अत्यधिक रुचिकर होगी। वैसे तो बाबा के उद्घोष सत्य, धर्म, शान्ति और प्रेम में विश्वास जमाना चाहिए—इनमें से सब न हो सके तो भी एक को ही आत्मसात करना चाहिए। परन्तु आज का युग, आज का मानव मस्तिष्क चमत्कारों से अधिक आकर्षित होता है और उन चमत्कारों की तालिका में यह चमत्कार भी, बाबा की महिमा अद्वितीय है.....

बाबा की कार सड़क पर जा रही थी कि ड्राइवर का ध्यान चूका और एक ओर से अचानक दौड़ता हुआ एक बच्चा कार के नीचे आ गया। सड़क पर हाहाकार मच गया। पकड़ो-पकड़ो, दौड़ो-दौड़ो। कार रुकी, किसी ने बच्चे को उठाया— उसकी क्या स्थिति हो रही होगी यह तो कल्पना ही की जा सकती है—लोगों का जमघट लगा जा रहा था। दूर से पुलिस वाले भी कार का चालान करने, बच्चे के मार ड़ालने वाले को पकड़ने के लिए दौड़ते आ रहे थे। तभी बाबा भी कार से बाहर निकले और उन्होंने बच्चे के पास पहुँच कर अपने दोने दैविक कर उसके शरीर पर फिराये। अरे यह क्या हुआ है? पुलिस वाले एकदम पास पहुँचे कि बच्चे ने जोर लगाकर अपने को उस व्यक्ति के हाथ से छुड़ाया जिसने उसे पकड़ कर उठाया हुआ था और हँसता हुआ एक ओर भाग गया। देखने वाले, पुलिस को बुलाने वाले, पुलिस वाले आँख फाड़-फाड़ कर देख रहे थे—जब दुर्घटना का मूल ही समाप्त हो गया है तो क्या कहते। चुपचाप बाबा की ओर विस्फारित नेत्रों से देखते कुछ नमन करते

से चले गये। बाबा भी सहास्य कार में बैठे और वह करुणामूर्ति लोगों की दृष्टि से ओझल हो गयी।

बाबा श्री सत्य साई की सर्वज्ञता, सार्वभौमिकता और सर्वशक्तिशालिता का परिचय भक्तों को यदा-कदा प्रायः मिलता ही रहता था। १५ नवम्बर १९५८ की घटना है, संध्या के ५.२० हुए थे, तभी बाबा के मुँह से निकला—हा, और बाबा का शरीर शान्त हो गया। उपस्थित भक्त जानते ही थे कि इस प्रकार की स्थिति का संकेत है कि बाबा कहीं सशरीर चले गए हैं—उनके किसी भक्त को उनकी आवश्यकता है और वह उसके पास हैं। फिर उस स्थान पर तो उनकी देह ही देखने को रह जाती है। दस मिनट का वक्त बीता होगा कि बाबा के गले से कफ की आवाज आई जैसे मृत्यु के समय किसी के गले से आवाज आती है और फिर तीन बार बाबा के मुँह से भस्मी की काफी मात्रा झटके से गिरी जो काफी दूर तक जाकर गिरी। पाँच मिनट के पश्चात् ही बाबा उठे और भक्तों ने उस विषय पर ही वार्ता शुरू कर दी जो पहले छोड़ा गया था। ऐसा प्रतीत हो रहा था कुछ हुआ ही नहीं है। भक्तों ने अपनी उत्सुकतावश उनसे पूछा, स्वामी आप कहां गये थे? बाबा ने उत्तर दिया—देहरादून में डा. के. की माता शरीर छोड़ रही थीं, उसको मेरा स्मरण भली प्रकार से था, वह मेरे दर्शन की कामना कर रही थी। उसको प्राण छोड़ने में कष्ट भी हो रहा था, तभी मैं उसके पाकुछ नहीं अपार निराकर शक्ति को तुम अनेक प्रकार के आकारों में देखते हो, अनुभव करते हो, लेकिन कब, जब तुम अनुभव करने के लिए कटिबद्ध हो जाओ तब।

अगले दिन डा. के. का पत्र प्राप्त हुआ जिसमें अपने माता के देहान्त की सूचना थी। उसमें लिखा स्वामी, ५.३० पर माता ने यह नश्वर शरीर छोड़ दिया। अन्त समय में भी वह आपका स्मरण कर रही थीं-उनकी स्थिति को देखते हुए तथा अन्त समय में उनकी मुख मुद्रा को समझते हुए प्रतीत होता है कि आप उनके सामने उपस्थित थे। जाते समय उन्हें कोई कष्ट नहीं हुआ और उनकी मुख-मद्रा प्रसन्न थी।

भगवान अपने भक्तों को, अपने आश्रितों को, अपने आराधकों को किस प्रकार जीवन और मृत्यु में, संसार के प्रत्येक भाग में किस प्रकार सहायक होते हैं इसका वर्णन किस प्रकार किया जाये। उसकी महिमा अनन्त है, लीला विचित्र है, बाबा ने अपने सम्भाषण में एक स्थान पर कहा भी था; मुझे समझने का प्रयास मत करो। बुद्धि के द्वारा मुझे नहीं जाना जा सकता, अपने को ही समझो—बस अपने को ही समझ लोगे तो मेरा आभास तुम्हें हो जायेगा। यही मेरा रहस्य है—यह मेरी महिमा है। सत्य, धर्म, शान्ति और प्रेम में से किसी एक को भी यदि तुम अपने जीवन में अपना लोगे तो मैं तुम्हारी समझ में आने लगूंगा।

बाबा के संकल्प की शक्ति देखकर दर्शक चमत्कृत होते रहते हैं। बाबा का हाथ वायु में उठता है और उसमें जो भी उनकी इच्छा रहती है वह वस्तु उपस्थित हो जाती है—एक दिन बाबा के सम्मुख टी. चौधिया नामक विद्वान उपस्थित थे। उनको देने के लिए बाबा ने अपना हाथ उठाया और तभी भक्तों ने देखा कि उनके हाथ में स्वर्ण का मेडिल है। बाबा ने वह मेडिल सबको दिखाया, फिर स्वयं ही बोले—अरे! इस पर देने वाले का नाम भी तो अंकित होना चाहिए, ऐसा कहते-कहते बाबा ने उस मेडिल को अपने दोनों हाथों में क्षण भर को दबाया पुनः हाथ हाथ खोलकर वह मेडिल टी. चौधिया महाशय को प्रदान किया। उपस्थित जनों ने देखा—उन दो क्षणों में ही उस स्वर्ण मेडिल पर लिखा जा चुका था,'भगवान श्री सत्य साई बाबा की ओर से विद्वान टी. चौधिया को भेंट' उसके नीचे उस दिन की तिथि और दिनांक भी खुदा हुआ था। हर्ष पूरित मन से विद्वान ने मेडिल को लेकर अपने शीश पर धर लिया। भगवान का आशीर्वाद—प्रभु का दिया प्रसाद—जो मिला था?

बाबा ने अपने हाथ से उत्पन्न करके कभी भी किसी को भी कोई भी वस्तु दे देते हैं। अंगूठी, नेकलेस, मंगलसूत्र, घड़ी, मेडिल या फिर उस भक्त की इच्छानुसार भी। यह देखा गया है कि भक्त को वही वस्तु उसके द्वारा की जाती है, जिसकी उसको आकांक्षा होती है अथवा जो इसको लाभदायक होती है।

बाबा के दिए उपहार को भी उस भक्त को भी अलग नहीं कर सकता, कोई भी उस उपहार को चुरा नहीं सकता। एक बार एक भक्त पुट्टपर्ती से अपने स्थान हैदराबाद को वापिस आ रहे थे कि उनका सन्दूक ही किसी ने चुरा लिया। उनहोंने अपने सन्दूक खोने की रिर्पोट पुलिस में करायी। दो दिन के पश्चात् पुलिस ने कहीं से उनका सन्दूक मय सामान के खोज निकाला और भक्त महोदय को अपना सामान और सन्दूक पहचान कर ले जाने के लिए पुलिस ने बुलाया। भक्त पुलिस स्टेशन पर पहुँचे और उन्होंने अपना सामान पहचाना। उनके दुःख का उस समय कोई भी ठिकाना न रहा जब उनहोंने पाया कि उस सन्दूक में रखी हुई बाबा के द्वारा दी गई माला ही केवल गायब थी और कोई भी सामान उस सन्दूक से नहीं गया था, किसी प्रकार अपना सामान लेकर वह भक्त अपने घर गये और उन्होंने बाबा को माला के चोरी हो जाने की सूचना तार से दी। बाबा का उत्तर आया—माला मेरे पास वापस आ चुकी है, घबराओ मत, तुमको मिल जायेगी। मेरी दी हुई वस्तु चोर नहीं ले जा सकता।

एक दिन बाबा मोटर से बंगलौर जा रहे थे। मार्ग में मोटर रुकी और ड्राइवर ने सहमते हुए अपनी लापरवाही बाबा को बतायी कि पैट्रोल समाप्त हो गया है, बाबा ने सहास्य कहा, भय मत करो, जब मैं हूँ तब चिन्ता किस बात की। सामने ही तालाब में पानी भरा हुआ था, बाबा ने कहा, जाओ बाल्टी भर लाओ। ड्राईवर पानी की बाल्टी भर लाया। बाबा ने उस पानी में अपनी उंगली डाल दी और उसको टंकी में डालने को कहा। ड्राइवर ने टंकी में पानी डाला और फिर ठीक उसी तरह जैसै पैट्रोल की गाड़ी जाती है मोटर चली और बंगलौर पहुँची। ऐसा ही प्रशान्ति निलियम् में होने वाले उत्सव में हुआ जबकि बिजली उत्पन्न करने वाले इंजन को चलाने के लिए डीजल ऑयल की कमी महसूस की गयी। समय भी नहीं था कि डीजल मंगवाया जा सकता। अचानक ही ध्यान न रहने के कारण ऐसा हुआ था। डरते-डरते बाबा को सूचित किया गया, बाबा ने हँसते हुए कहा, चिन्ता मत करो, जाओ पानी भर लाओ, पानी भर-भर कर बाल्टियाँ लाई गई, स्वामी ने उन बाल्टियों में अपनी उँगली का स्पर्श भर कराया और पानी ठीक डीजल ऑयल बन गया। उसने

वही काम उचित प्रकार से किया जो डीजल ऑयल करता है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण से यह गाथायें कपोल कल्पित लगती हैं। विज्ञान इस प्रकार सोचने की अनुमति नहीं देता। फिर यह सब क्या है? बाबा के शब्दों पर फिर से एक बार सोचने को विवश होना पड़ता है।

"विज्ञान की सीमायें जहाँ समाप्त होती हैं, वहाँ से आध्यात्म की सीमा प्रारम्भ होती है।"

भक्त की स्थिति के अनुसार ही बाबा उसको अर्चना हेतु चित्र प्रदान करते हैं। एक भक्त को बाबा ने भगवान रामकृष्ण परमहंसदेव का चित्र अपने कर से उत्पन्न करके दिया—उस चित्र के हृदय में भी भगवान शिरडी साई का चित्र बना हुआ था और उसके हृदय में भी भगवान सत्य साई का छोटा रूप दिखाई दे रहा था। उस भक्त के आराध्य देव श्री रामकृष्ण परम हंस ही थे। जिसको जो भी इष्ट हो, उस ही की अर्चना करो। यही भगवान सत्य साई का सन्देश है। मैं उसके रूप में भी तो हूँ। वह रूप भी तो मेरा है। उसकी की जाने वाली पूजा भी तो मुझको पहुँच रही है। सर्वधर्म समन्वय का कितना सुन्दर सन्देश प्रसारित हो रहा है भगवान सत्य साई के द्वारा। मार्ग बहुत से हैं, परन्तु गन्तव्य सबका एक ही है। किसी भी मार्ग से आने वाला अन्त में उस ही लक्ष्य पर पहुँचेगा। किसी भी मार्ग से बढ़ो, लेकिन बढ़ो तो सही। बिजली की शक्ति से हीटर भी जलता है और रैफ्रीजरेटर में भी सामान भी ठंडा होता है। उससे बल्ब भी जलता है और पंखा भी चलता है—लेकिन यदि तुम यह चिल्लाने लगो कि बिजली तो ठंडी है उसके अतिरिक्त कुछ नहीं है या बिजली गर्म है उसके अतिरिक्त जो कुछ कहा जाता है झूठ है या बिजली घूमती है या बिजली रोशनी ही है तथा अपने-अपने पक्ष के लिए झगड़ा करने लगो तो फिर यह अज्ञान के अतिरिक्त कुछ भी नहीं होगा। विद्युत तो केवल शक्ति मात्र है, उसके उपयोग करने का प्रकार अपना अलग हो सकता है। जिस प्रकार उपयोग करोगे वह कार्य करेगी, चाहे उससे ठंडा करो या गर्म। उस शक्ति का जितना प्रयोग तुम खोज पाये हो—कर रहे हो। परन्तु तुम यह तो नहीं कर सकते कि बस इससे अधिक इसका प्रयोग और होता—उस अपार निराकर शक्ति को तुम अनेक प्रकार के आकारों में देखते

हो, अनुभव करते हो, लेकिन कब, जब तुम अनुभव करने के लिए कटिबद्ध हो जाओ तब।

वेंकटागिरी के एक भक्त को पोस्टेज स्टाम्प एकत्रित करने का शौक था। उसके हाथ में एक शीट, जिस पर किसी पृथ्वीपति के चित्र थे—बाबा ने हँसते हुए कहा—यह क्यों एकत्रित करते हो और ऐसा कहते-कहते उनहोंने उस शीट पर अपना दैविक कर फिरा दिया। उस महाशय की आश्चर्य की सीमा न रही क्योंकि उस चित्र के स्थान पर अब उस शीट पर भगवान श्री सत्य साई के चित्र बने हुए थे।

स्वयं के लिए भगवान के पास कुछ नहीं है। कैसी विचित्र लीला है उनकी। एक बार भक्तों सहित साहब तालाब से वापिस आ रहे थे, तभी एक ओर से भंयकर विषधर ने निकल कर उनके चरण में लिपटते हुए काट लिया, बाबा ने पाँव झटकते हुए कहा, जाओ, फिर भक्तों की ओर मुड़ते हुएकहा उसे जाने दो भक्तगण साँप के काटने से परेशान हो उठे थे। उनमें से कोई साँप का विष उतारने वाले को लेने के लिए गाँव की ओर दौड़ा। बाबा ने उपस्थित भक्तों में से एक को कहा—तुम अपना हाथ उस ही प्रकार घुमाओ—जैसे मैं घुमाता हूँ तुम्हारे हाथ से ही भस्मी प्रवाहित होगी, और उस भस्मी को मेरे होंठों में लगा दो। उस भक्त ने वैसा ही किया, उसके हाथ से भस्मी निकली और उसने वह भस्मी बाबा के मुख में लगा दी। कुछ क्षणों में ही बाबा पूर्व की तरह स्वस्थ होते हुए चल दिये। जिनके प्रताप से भक्त के हाथ से भस्मी उत्पन्न हो सकती है, जिनके प्रताप से विष व्यर्थ हो सकता है, वह स्वयं अपने लिए कुछ भी उत्पन्न नहीं करते, अपनी उत्पन्न की वस्तु को ग्रहण नहीं करते। यह सब उनकी लीला है—भक्तों के व्यामोहित किये रहने की महिमा है। उनकी लीलाओं का पार पाया ही नहीं जाता। किसी क्षण ऐसा प्रतीत होता है जैसे उनके विषय में सब कुछ समझ आ रहा है, परन्तु दूसरे ही क्षण यह प्रतीत होता है—नहीं यह गलत है, यह सही है आदि-आदि। यदि हम इस परम विश्वास में स्थित हो जायें तो फिर महामाया के क्षेत्र से मुक्त होकर उन ही के स्वरूप में लय न हो जायें! फिर हमारे और श्री सत्य साई में द्वैत रहे ही कहाँ से, परन्तु–सो जाने जिहि देहु जनाई–जानत तुमहि-तुमहि होई जाई।

लोक शिक्षक लोक सेवा में

पिछले कई वर्षों में विश्व के प्रत्येक भाग से स्त्री-पुरुष एवं बच्चे बड़ी संख्या में, एक अविरल चलती रहने वाली धारा के रूप में प्रशान्ति निलयम् में आये और बाबा के दिव्य सान्निध्य को प्राप्त कर आनन्दित हुए। पल-पल में उनकी महिमा को प्रकट करने वाली असंख्य घटनाओं से अवगत होना हमारे लिए निश्चित रूप से असम्भव है। आज के हमारे संकटग्रस्त संसार में इस विलक्षण तथ्य का प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि बाबा के करोड़ो भक्त जहाँ कहीं भी हों, अपने साथ उनके दिव्य सान्निध्य का सतत अनुभव करते हैं। बाबा उनके जीवन एवं अस्तित्व का एक अविभक्त अंग बन गये हैं। साई के प्रति इस विशाल जन समूह का उमड़ता हुआ भक्ति-भाव अब मानवजाति के प्रति सेवा के रूप में अभिव्यक्त हो रहा है।

वास्तव में लोकशिक्षक अब लोक सेवा में लगे हुए हैं। धर्मसंस्थापना का उनका दैवी लक्ष्य अब आधारभूत मानवीय मूल्य सत्य, धर्म. शान्ति, प्रेम और अहिंसा के पुरुत्थान के साथ पल्लवित और पुष्पित होता हुआ सम्मुख आ रहा है। यद्यपि एक अवतार के रूप में वे तुरन्त ही इस दैवी लक्ष्य की प्राप्ति कर सकते हैं, परन्तु इसके स्थान पर उन्होंने एक नियमित विकासात्मक प्रविधि का चयन किया है जिससे कि प्रत्येक प्राणी इस विश्व में ही ईश्वरत्व के हर्ष और आनन्द का अनुभव कर सके। वे हम सबको इस सत्य की अनुभूति कराना चाहते हैं कि व्यष्टि की सुख-शान्ति समष्टि की सुख-शान्ति पर ही निर्भर है।

अनेक व्यक्तियों के लिए विश्व-शान्ति केवल एक आदर्श हो सकती है, परन्तु जिन्हें बाबा और उनके मंगल कृत्यों को देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है उनके लिए वह एक ऐसी वास्तविकता है जो निकट भविष्य में ही साकार हो जायेगी। जैसे-जैसे सत्य साई अवतार की सातवीं वर्षगाँठ (23 नवम्बर 1985) निकट आती जा रही थी, वैसे-वैसे तथ्य पहल स भा कहा आधक स्पष्ट होते जा रहे थे कि विश्व की सभी शक्तियों पर, चाहे वह कितनी भी संक्रामक तथा निषेधात्मक क्यों न हों, साई निश्चित रूप से ही हावी रहेंगे, आज से बीस वर्ष पूर्व जब बाबा ने यह घोषणा की थी कि उनकी झलक मात्र

प्राप्त करन वालों की संख्या इतनी बढ़ जायेगी कि उन्हें दूर से एक बिन्दु के रूप में देखना भी दुर्लभ हो जायेगा, तब तथ्य का विश्वास करने वालों की संख्या बहुत विशाल हो जाएगी। परन्तु एक-एक वर्ष बीतने के साथ, जैसे-जैसे अधिकाधिक व्याकुल हृदय की प्यास साई के अलौकिक प्रेम को पाकर शान्त होती जा रही है, वैसे-वैसे ही वह घोषणा भी स्वयं सत्य सिद्ध होती जा रही है।

बाबा श्री सत्य साई विश्विद्यालय के कुलपति

बाबा की कार्य-पद्धति में सर्वप्रथम स्थान शिक्षा को दिया गया है। बीसवीं शताब्दी के छठे दशक के अन्तिम वर्षों में बाबा ने साई समिति द्वारा बाल-विकास का कार्यक्रम विश्वभर को दिया। इस कार्यक्रम के अंतर्गत 6 से 15 वर्ष तक के आयु वर्ग के बच्चों को विद्यालय में शिक्षा प्राप्ति में बिताये समय के अतिरिक्त उसे बाहर नैतिक, आध्यत्मिक तथा सांस्कृतिक शिक्षा दी जाती है। लगभग ८०,००० बच्चे आजकल इन कक्षाओं से लाभान्वित हो रहे हैं। विस्तृत अनुसंधान के द्वारा प्राप्त आंकड़ों ने यह प्रमाणित किया है कि बाल-विकास के बच्चे अपने आचरण-व्यवहार से उत्कृषट मेधा, कर्तव्य निष्ठा, भक्ति एवं अनुशासन का परिचय देते हैं। इन बाल-विकास कक्षाओं का संचालन इस कार्य के प्रति पूर्णतः समर्पित बाल-विकास गुरुओं के संगठन द्वारा किया जाता है। ये गुरु स्वयं ही समय-समय पर प्रशिक्षण प्राप्त करते रहते हैं। दिसम्बर १९८३ का महीना प्रशान्ति निलयम् में घटित एक अविश्वसनीय घटना का साक्षी था। वह घटना थी—'अन्तर्राष्ट्रीय बाल-विकास समारोह' जिसमें 12,000 से भी अधिक शिक्षक और विद्यार्थी भगवान बाबा के चरण कमलों में अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने एकत्रित हुए थे। इस प्रकार वह सभी के लिए एक अविस्मरणीय अनुभव था।

दूसरी ओर बाबा ने अनन्तपुर में महिलाओं के लिए एक महाविद्यालय प्रारम्भ कर सम्पूर्ण भारत में बड़ी संख्या में सत्य साई विद्यालय तथा

महाविद्यालय स्थापित करने की प्रेरणा दी। ये विद्या मन्दिर शिक्षा एवं अन्य दृष्टिकोणों से श्रेष्ठ स्तरों को सम्पोषित करते हुए अपना विशिष्ट महत्व रखते हैं। नवम्बर 1981 में श्री सत्य साई विश्वविद्यालय की स्थापना से इस रत्नमाला में सर्वाधिक बहुमूल्य रत्न आ जुड़े। भारत सरकार द्वारा इतने अल्प समय में श्री सत्य साई इंस्टिट्यूट ऑफ हायर लर्निंग (डीम्ड यनिवर्सिटी) को स्थापित करने की अनुमति देना, और साथ ही भगवान बाबा को उनके कुलपति के रूप में मनोनीत करना अपने आप में अद्भुत घटनायें थीं। इस विश्वविद्यालय का प्रत्येक पहलू अवलोकनीय है। इसकी शिक्षा सम्बन्धी अवधारणा, प्रशासकीय व्यवस्था, शिक्षण पद्धति तथा परीक्षा-प्रणाली सभी ने विश्व इतिहास में एक नवीन गोरवपूर्ण अध्याय का शुभारम्भ किया है।

इस विश्वविद्यालय के दिव्य कुलपति के रूप में बाबा ने शिक्षा के वर्तमान मानदण्डों के समक्ष एक रूचिकर चुनौती प्रस्तुत की है। वे व्यक्ति जिन्होंने स्वयं एक साधरण विद्यालय से केवल आठवीं कक्षा तक शिक्षा प्राप्त की है, एक ऐसे विश्वविद्यालय के कुलपति हैं जहां पी.एच.डी. तक की शिक्षा की व्यवस्था है और जिनकी अविवाद्य प्रज्ञा विश्वविद्यालय के सभी विद्वानों के लिए प्रेरणा का स्रोत है। प्रशान्ति निलयम् के अतिरक्त इस विश्वविद्यालय के दो अन्य परिसर भी हैं—एक बंगलौर के निकट वृन्दावन में तथा दूसरा महिलाओं के लिए अनन्तपुर में।

इस प्रकार आज प्रशान्ति निलयम् शिक्षा का एक प्रमुख केन्द्र है। वहाँ स्थित विद्यागिरी में एक प्राथमिक विद्यालय, एक माध्यमिक विद्यालय, एक कनिष्ठ महाविद्यालय (जूनियर कालेज) तथा सत्य साई विश्वविद्यालय हैं। इस प्रकार वहाँ निम्नतन कक्षा से लेकर उच्चतम कक्षा तक की शिक्षा का प्रबन्ध है।

बाबा द्वारा प्रदत्त सेवा संगठन और मानवीय मूल्यों का कार्यक्रम

सत्य साई सेवा संगठन, मानवजाति के कल्याण के लिए बाबा का एक अत्यन्त विलक्षण योगदान है। यह विश्वव्यापी संगठन साई के मार्ग-दर्शन के अनुरूप चल कर आध्यात्मिकता, सेवा तथा शिक्षा के क्षेत्रों में समाज सेवा करते हुए साई के प्रति अपने समर्पण-भाव को अभिव्यक्त कर रहा है। संपूर्ण भारत में नवम्बर **1985** तक **6,000** गाँवों का सर्वांगीण विकास भी इन्हीं गतिविधियों के अन्तर्गत आता है। शिक्षा के मानवीय मूल्य (मानवाभ्युदय) का कार्यक्रम अनेक समस्याओं का एकमात्र समाधान है। इसकी विषय-वस्तु वर्तमान शिक्षा प्रणाली में मूल्यबोधिनी शिक्षा का पुट जोड़ देती है। कार्यक्रम मूल-भूत मानवीय मूल्यों का ज्ञान बच्चों को देने का प्रयत्न करती है जिससे कि ये मूल्य उसके जीवन के अभिन्न अंग बन सकें और उनके व्यक्तित्व को वास्तविक अर्थो में सम्पूर्ण बना सकें। श्री सत्य साई की मानवीय मूल्यों में शिक्षा का कार्यक्रम भारत सरकार तथा अनेक राज्य-सरकारों द्वारा कार्यान्वयन के लिए स्वीकार लिया गया है।

इस प्रकार बाबा द्वारा किये जा रहे अथक परिश्रम का एक मात्र यही उद्देश्य है कि मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में शान्ति एवं दिव्यता का प्रसार हो।

बाबा समस्त विश्व के पैगम्बर

जिन शुभ कार्यो की प्रेरणा एवं शिक्षा देते है साई, वे केवल भारत की सीमाओं तक सीमित नहीं रहते, अपितु समस्त मानव जाति उनसे लाभान्वित होती है। आज तक कभी भी विश्व-परिवार (वसुधैव कुटुम्बकम) की धारणा इतनी सुस्पष्ट नहीं हुई थी। परन्तु साई परिवार मानव के प्रति भ्रातृ-भाव तथा ईश्वर के प्रति पितृ-भाव की अनिवार्यता पूर्णत: स्वीकार करता है। आज साई संगठन पचास से भी अधिक देशों में क्रियाशील है। उन सभी का उद्देश्य साई की दिव्य निधि को सभी के साथ समान रूप से बांटना है।

अत: प्रबुद्ध व्यक्ति यह देख सकते हैं कि किस प्रकार धर्म संस्थापन का पुनीत कार्य एक सुनिश्चित रूप धारण करता जा रहा है तथा किस प्रकार साई अवतार के दैवी संकल्प के समक्ष सभी विघ्न-बाधायें स्वयं विलीन होती जा रही हैं। आइये, हम सब इस स्वर्णिम अवसर पर सम्मिलित होकर अपना सम्पूर्ण प्रेम, जीवन तथा श्वास साई के दिव्य चरण-कमलों में अर्पित कर दें।

97995
14/7/2009

Library IIAS, Shimla
H 294.572 Sa 21 A
00097905